(1) केवल हेडिंग याद करें वाली केवल पढ़कर देखें
(2) केवल हेडिंग बिना देखे अपनी कॉपी पर लिख कर आगे देखें।
(3) प्रश्न अपने मन से स्वयं बनाएं।

9

B.A. I sem

विषय प्रवेश

(संस्कृति तथा कला स्रोत)

संस्कृति तथा कला

किसी भी देश की संस्कृति उसकी आध्यात्मिक, वैज्ञानिक तथा कलात्मक उपलब्धियों की प्रतीक होती है। यह संस्कृति उस सम्पूर्ण देश के मानसिक विकास को सूचित करती है। किसी देश का सम्मान तथा उसका अमर-गान उस देश की संस्कृति पर ही निर्भर करता है। संस्कृति का विकास किसी देश के व्यक्ति की आत्मा तथा शारीरिक क्रियाओं के समन्वय एवं संगठन से होता है।

संस्कृति का रूप देश तथा काल की परिस्थितियों के अनुसार बदलता है। भारतीय संस्कृति का इतिहास बहुत विस्तृत है। भारतीय संस्कृति का विकास लगभग पाँच सहस्र वर्षों में हुआ और इस संस्कृति ने विविध क्षेत्रों में इतना उच्च विकास किया कि संसार आज भी भारतीय संस्कृति से अनेक क्षेत्रों में प्रेरणा ग्रहण करता है। संस्कृति का रचना-क्रम भूत, वर्तमान तथा भविष्य में निरन्तर संचरित होता रहता है।

मानव संस्कृति में कलात्मक तथा आध्यात्मिक विकास का उतना ही महत्त्व है जितना वैज्ञानिक उपलब्धियों का। कलात्मक विकास में मुख्यतया साहित्य, कला अथवा शिल्प, स्थापत्य, संगीत, मूर्ति, नृत्य, एवं नाटक का विशेष महत्त्व है। अतः किसी देश की संस्कृति का अध्ययन करने के लिये उस देश की कलाओं का ज्ञान परम आवश्यक है। कला के द्वारा देश के समाज दर्शन तथा विज्ञान की यथोचित छवि प्रतिबिम्बित हो जाती है। दर्शन यदि मन की क्रिया है तो विज्ञान शरीर की क्रिया है परन्तु कला मानव आत्मा की वह क्रिया है जिसमें मन तथा शरीर दोनों की अनुभूति

निहित है। अतः कला मानव संस्कृति का प्राण है जिसमें देश तथा काल की आत्मा मुखरित होती है।

कला संस्कृति एवं सभ्यता

कला संस्कृति का वह महत्त्वपूर्ण अंग है जो मानव मन को कोमल सुंदर तथा व्यवस्थित बनाती है। भारतीय कलाओं में धार्मिक तथा दार्शनिक मान्यताओं की अभिव्यक्ति सरल ढंग से की गई है। भारतीय चाक्षुष-कलाओं में दार्शनिक तत्वों को प्रतीक रूप में संजोया गया है और धार्मिक प्रसंगों को विस्तृत रूप से प्रतिबिम्बित किया गया है। इस प्रकार संस्कृति यदि किसी देश की आत्मा है तो सभ्यता उस देश का तन है। मनुष्य ने प्रत्येक काल में अपने विकास के प्रयत्नों से अपने कार्यकलापों में निपुणता एवं कुशलता, अग्रसरता तथा विस्तीर्णता की परम सीमाओं को प्राप्त करने की चेष्टा की है जिससे उसकी सभ्यता का निरंतर विकास हुआ है। यही सभ्यता संस्कृति को बल प्रदान करती है और उसका अंग बनकर उसकी मान्यताओं को निरंतर आगे बढ़ाती रहती है। इस प्रकार हमारा रहन-सहन मानसिक विकास तथा जीवनचर्या, हमारी सभ्यता का प्रतीक है। सभ्यता से विकसित नवीन साधनों, यन्त्रों तथा प्रविधियों का प्रयोग करना हर प्रगतिशील कलाकार का उद्देश्य है, इस प्रकार कलाकार की कला-कृतियाँ संस्कृति के परम्परागत रूप को दर्शाती हुई, परिवर्तन ग्रहण करती हुई गतिमान रहती हैं। कलाकार की प्रविधियों तथा क्रियात्मक रूपों का समाज में शनैः शनैः प्रचलन होता जाता है। एक व्यक्ति दूसरे की कला देखकर कलाकार की रचना-विधियों को ग्रहण करता जाता है इस प्रक्रिया को परम्परा कहते हैं। इन सांस्कृतिक, सामाजिक एवं कलात्मक व्यवहारों के प्रचलन को ही परम्परा कहते हैं। प्रत्येक देश की इसी प्रकार एक कला-परम्परा बन जाती है जिसका उस देश की संस्कृति तथा सभ्यता में महत्त्वपूर्ण स्थान होता है।

कला का उद्देश्य

प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में जीवन के चार प्रयोजन बताये गए हैं :— १-अर्थ, २-काम, ३-धर्म तथा ४-मोक्ष। अतः मानव की कलाओं का उद्देश्य भी इन्हीं साधनों की प्राप्ति माना गया है।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण के चित्रसूत्र में इस प्रकार कहा गया है—

"कलानां प्रवरं चित्रं धर्मकामार्थमोक्षदम्।"

अर्थात् कला के द्वारा धर्म, काम, अर्थ तथा मोक्ष की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार भारत में 'कला के लिए कला' न होकर सम्पूर्ण जीवन के लिए कला को साधन माना गया है।

मानव की उत्पत्ति और विकास-क्रम

चित्रकला के इतिहास का अध्ययन करने से पूर्व मानव का विकास-क्रम भी देखना आवश्यक है। इस अध्ययन से आदिमानव की कलाकृतियों के काल-क्रम का अनुमान लगाया जा सकता है। जीव-वैज्ञानिकों के अनुसार पृथ्वी पर सर्वप्रथम एक कोष्ठक जीव ही थे और उनसे ही मनुष्य का विकास हुआ। जीव का यह विकास-क्रम चार भागों में विभाजित किया जा सकता है, जो इस प्रकार है–

(१) एज़ोईक कल्प,
(२) पैलोज़ोईक कल्प,
(३) मेसोज़ोईक कल्प
(४) सिनोज़ोईक कल्प

(१) एज़ोईक युग या कल्प–इस युग में पृथ्वी पर एक कोष्ठक जैव ही था। यह जैव आज से लगभग एक अरब पचास करोड़ वर्ष पूर्व पृथ्वी पर विकसित हुआ।

(२) पैलोज़ोईक युग या कल्प–इस युग में जीव सर्वप्रथम अकशेरुकी (Invertebrates) प्राणियों जैसे सिवार, स्पन्ज या जैली मछली तथा रेंगने वाले जीवधारियों, पक्षियों तथा विशालकाय वृक्षों और जंगलों के रूप में विकसित हुआ।

(३) मेसोज़ोईक युग या कल्प–इस युग में कशेरुकी जीवों का विकास हुआ जिन्हें (Reptiles) सरीसृप माना जाता है।

(४) सिनोज़ोईक युग या कल्प-इस युग में आज जैसे जीव का विकास हुआ जिससे विभिन्न प्रकार के स्तनधारी उत्पन्न हुए। इन स्तनधारी जीवों के विकास के साथ मनुष्य का विकास भी हुआ। मनुष्य की उत्पत्ति आज से लगभग २०,००,००० वर्ष पूर्व मानी जाती है। इस समय मनुष्य अनुमानतः वनमानुषाकार रहा होगा। इसी वनमानुषाकार अवस्था से मानव ने आज जैसे मनुष्य का रूप लिया है और यही सृष्टि के विकास का चरमोत्कर्ष और अंतिम चरण है।

भारतवर्ष का आदि रूप

भूगर्भ-वेत्ताओं की खोजों के आधार पर भारत के उपद्वीप का रूप आज जैसा न था, बल्कि केवल दक्षिणी भारत कई द्वीपों का एक समूह था जो भूगर्भवित्ताओं के द्वारा 'गोंडवाना' के नाम से पुकारा गया है। यह प्रायद्वीप दक्षिणी अफ्रीका, आस्ट्रेलिया तथा दक्षिणी अमेरिका तक फैला हुआ था। इन सब द्वीपों से प्राप्त अश्मीभूत वनस्पति और पशुओं के अवशेषों या फासिलस में साम्य से भी ऐसा ही ज्ञान प्राप्त होता है।

आदिकाल के मानव की चित्रकला

भारत की आदिकालीन चित्रकला का अध्ययन करने के लिए हम इस काल को तीन भागों

में विभाजित कर सकते हैं–

(१) प्रागैतिहासिक काल (२) वैदिक काल (३) पूर्व-बौद्ध काल।

प्रागैतिहासिक काल

मनुष्य ने पृथ्वी पर जन्म लेने के पश्चात् अपनी असहाय स्थिति को देखा। प्रकृति की महान शक्तियों के सम्मुख उसकी नगण्य चेतना जाग्रत हुई और उसने उदर की क्षुधा शान्त करने के लिए, शरीर को शीत, ताप और वर्षा से सुरक्षित रखने के लिए तथा भयंकर पशुओं से अपनी सुरक्षा करने हेतु नाना सुरक्षात्मक प्रयत्न किये। उसने इस काल (छः लाख वर्ष ई० पू०) में पाषाण के औज़ार तथा हथियार बनाये जिनसे वह आखेट करके उदरक्षुधा की पूर्ति तथा अपने शरीर की सुरक्षा कर सके। हजारों वर्ष बाद इसी विकास-क्रम में आगे चलकर उसने सुरक्षा के लिये गुहाओं की शरण ली। उसने अपने जीवन की कोमल भावनाओं में आखेट की गति और पशुओं की मनोहारी छवि का अनुभव किया, जिसको उसने रंगों से सनी तूलिका तथा टांकी या नुकीले पत्थर से गुफाओं तथा चट्टानों की कठोर भित्तियों या समतल शिलाओं पर उकेर कर रख दिया। इस प्रकार उसने अपने जीवन के मधुर तथा विषादमय क्षणों को अमर बना दिया। उसने पर्वतों की गुहाओं तथा कंदराओं को अपना निवास बनाया और अनगढ़ प्रस्तर-खण्डों को काटकर उसने आखेट के लिये उपयोगी हथियार बनाये। इन कंदराओं को गर्म और प्रकाशित करने के लिये उसने पशु की चर्बी तथा लकड़ी को जलाया। उसने इन गुफाओं के भीतर धूमिल प्रकाश में अपने जीवन की सरस तथा सरल अभिव्यक्ति तूलिका के माध्यम से गुफाओं की खुरदुरी दीवारों तथा फर्श पर चित्र बनाकर अंकित कर दी। इस समय मनुष्य ने विशेष रूप से पाषाण, लकड़ी तथा मिट्टी का ही प्रयोग किया, इस कारण इस काल को विद्वानों ने 'पाषाण-युग' के नाम से पुकारा है।

मानव की प्रगति के आधार पर पाषाण-युग को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है–

(१) पूर्व पाषाण-युग या पुरा प्रस्तर युग (Paleolithic Age or Mesolithic Age)– ३०,००० ई० पू० से २५,००० ई० पू० तक।

(२) मध्य-पाषाण युग का मध्य प्रस्तर युग (Middle Stone Age or Mesolithic Age)– २५,००० ई० पू० से १०,००० ई० पू० तक।

(३) उत्तर-पाषाण युग या नव प्रस्तर युग (Neolithic Age)– १०,००० ई० पू० ५,००० ई० पू० या ३००० ई० पू० तक।

(१) पूर्व पाषाण-युग–इस युग के अवशेष विशेष रूप से औज़ारों व हथियारों आदि के रूप में मिलते हैं, जिनमें असंयत गढ़न है तथा आकार भद्दे। यह प्राचीन अवशेष प्रायः पशुओं की अश्मीभूत अस्थियों के साथ प्राप्त हुए हैं।

२

आदिकाल की चित्रकला

(गुहाओं, कंदराओं, शिलाश्रयों की चित्रकला)

(३०,००० ई० पू० से ५० ई० तक)

चित्रकला का उद्‌गम

चित्रकला का इतिहास उतना ही पुराना कहा जा सकता है, जितना मानव का इतिहास। मनुष्य ने जिस समय प्रकृति की गोद में नेत्रोन्मीलन किया उस समय से ही उसने निर्माण के तारतम्य से अपने जीवन को सुखी तथा समृद्ध बनाने की चेष्टा की और इस निर्माण कार्य के फलस्वरूप उसने ऐसी कृतियों का सृजन किया जो उसके जीवन को सुखद और सुचारु बना सकें। इसी समय से मनुष्य की ललित भावना भी जाग उठी और उसने अपनी मूक भावनाओं को अनगढ़ पत्थरों के यन्त्रों तथा तूलिका से बनी टेढ़ी-मेढ़ी रेखा-कृतियों के रूप में गुहाओं (गुफाओं)और चट्टानों की भित्तियों पर अंकित कर दिया। उसके जीवन की कोमलतम भावनायें तथा संघर्षमय जीवन की सजीव झाँकियाँ-आदि मानव की कला-कृतियों के रूप में आज भी सुरक्षित हैं। आदिकाल से आज तक मनुष्य रेखा तथा आकार, तक्षण तथा कर्षण के द्वारा अपनी भावनाओं को व्यक्त करता चला आ रहा है। मानव ने रेखा और आकार के माध्यम से अपनी प्रगति, आत्मा और युग का सदैव स्वागत तथा चित्रांकन किया है। इन असंख्य चित्राकृतियों के आधार पर चित्रकला की आज एक निश्चित परिभाषा निर्धारित हो चुकी है।

चित्रकला की परिभाषा

"किसी समतल धरातल जैसे भित्ति, काष्ठ-फलक आदि पर रंग तथा रेखाओं की सहायता से लम्बाई, चौड़ाई, गोलाई तथा ऊँचाई को अंकित कर किसी रूप का आभास कराना चित्रकला है।"

कला अध्ययन के स्रोत

कला अध्ययन के स्रोत से अभिप्राय उन साधनों से है जो प्राचीन कला-इतिहास के जान
में सहायता देते हैं। भारत की चित्रकला के अध्ययन के स्रोत निम्न श्रेणियों में विभक्त कि
जा सकते हैं–

(१) धार्मिक ग्रन्थ (Religious Books)–धार्मिक ग्रन्थ जैसे वेद, पुरा
उपनिषद, रामायण, महाभारत आदि तथा जैनियों तथा बौद्धों के ग्रन्थ उस प्राचीन सम
की कला पर पर्याप्त प्रकाश डालते हैं। रामायण, महाभारत तथा बौद्ध थेराथेरी की कथा
आदि में कला की पर्याप्त चर्चा की गई है।

(२) ऐतिहासिक ग्रन्थ (Historical Books)–प्राचीन काल के राजा अपने राजक
की घटनाओं को लिखवाया करते थे। बहुत सी प्राचीन पुस्तकें तथा लेख नष्ट हो चुके
परन्तु फिर भी अनेक ऐसे प्रमाण मिलते हैं जिनसे कला विषयक ज्ञान प्राप्त होता है।

(३) शिलालेख (Inscriptions)–शिलाओं पर अंकित कई प्राचीन शिलाले
लेख बादामी, अजन्ता तथा बाघ आदि गुफाओं से प्राप्त हैं जिनसे इनकी कला-शैलि
का ज्ञान होता है। महाराज अशोक के खुदवाये अनेक शिलालेख प्राप्त हैं तथा समुद्रगु
के समय का एक लेख भी इलाहाबाद के दुर्ग में प्राप्त है जिससे मौर्यकालीन मूर्तिकला आ
के विषय में ज्ञान प्राप्त होता है।

नृत्य दर्शाया गया है। महासंहार के उपरान्त नव-सृष्टि का क्रम निरन्तर प्रवाहित है जो नटराज के महान कलात्मक रूप में कलाकार ने साक्षात् कल्पित किया है।

६. **प्रतीकात्मकता**—प्रतीक कला की भाषा होते हैं। पूर्वी देशों की कलाओं में भारतीय कला के समान ही यथार्थ आकृतियों पर आधारित प्रतीक तथा साँकेतिक प्रतीकों का अत्याधिक महत्त्व है। भारत की कलाओं में जटाजूट, मुकुट, सिंहासन, वृक्ष, कलश, चक्र, पादुका, कमल, हाथी, हंस आदि प्रतीकों का विशेष स्थान है।

कलाकारों ने अपने भावों को व्यक्त करने के लिए प्रत्यक्ष तथा साँकेतिक अथवा कलात्मक दोनों प्रकार के प्रतीकों का सहारा लिया है। प्रकृति, पर्वत, यक्ष-देवता तथा ममता के लिए प्रतीकों के द्वारा बिम्बित किया गया है।

७. **आकृतियाँ तथा मुद्रायें**—भारतीय कलाओं में आकृतियों तथा मुद्राओं को आदर्श रूप प्रदान करने के लिए अतिश्योक्तिपूर्ण अथवा चमत्कारपूर्ण तथा आलंकारिक रूप प्रदान किये गए हैं। यही कारण है कि अधिकांश भारतीय, चित्रकला तथा मूर्तिकला में भारत की शास्त्रीय नृत्य शैलियों की आकृतियों, मुद्राओं तथा अंगभंगिमाओं का विशेष महत्त्व है। मानव आकृतियों या जीवधारियों की आकृतियों की रचनाएँ यथार्थ की अपेक्षा भाव अथवा गुण के आधार पर की गई हैं। मुद्राओं के विधान से आकृति की व्यंजना की गई है तथा आकृति के भावों को दर्शाया गया है। अजंता शैली की मानव आकृतियाँ तो अपनी भावपूर्ण नृत्य-मुद्राओं के कारण जगत प्रसिद्ध हैं ही, राजपूत तथा मुगल शैलियों में भी विविध नृत्य मुद्राओं का समावेश किया गया है। मुद्राओं के द्वारा अनेक भाव सफलता से दर्शाये गए हैं—उदाहरणार्थ ध्यान, उपदेश, क्षमा, भिक्षा, त्याग, तपस्या, वीरता, क्रोध, विरह, काँटा निकालने की पीड़ा, प्रतीक्षा, एकाकीपन आदि मानव मन के भावों को बड़ी सरल तथा स्वाभाविक मुद्राओं के द्वारा मूर्तिमान किया गया है। भारतीय कलाओं में मुद्राओं का आधार भरत मुनि द्वारा रचित 'नाट्य-शास्त्र' था। नाट्य-शास्त्र के अभिनय प्रकरण में वर्णित अंगों तथा उपांगों के भिन्न-भिन्न प्रयोगों के द्वारा अनेक मुद्राओं का अवतरण किया गया है। मुद्राओं को हम भाव-छवि भी कह सकते हैं।

८. **सामान्य पात्र**—पाश्चात्य कला में व्यक्ति वैशिष्ठ का महत्त्व है परन्तु भारतीय कला में सामान्य पात्र-विधान परम्परागत रूप से विकसित किया गया है। सामान्य पात्र विधान का अर्थ है आयु, व्यवसाय अथवा पद के अनुसार पात्रों की आकृति तथा आकृति के अनुपातों का निर्माण करना। राजा, रंक, देवता तथा राक्षस, साधु तथा सेवक, स्त्री, गंधर्व, शिशु, किशोर युवक तथा वामन आदि के रूपों तथा उनके अंग-प्रत्यंग के अनुपातों को भारतीय कला में निश्चित किया गया है। पद अथवा व्यवसाय के अनुसार उनके चिन्ह तथा आसन आदि भी निश्चित किये गए हैं।

९. **आलंकारिकता**—अलंकरण से आकर्षण प्राप्त होता है, अतः कला का कार्य अलंकरण करना भी है। भारतीय कलाकार सत्यं तथा शिवं के साथ सुंदरं की कल्पना

मध्यकालीन शिल्प-शास्त्रीय रचना 'अपराजित-पृच्छा' में चित्र के उद्देश्य एवं क्षेत्र के विषय में रोचक वर्णन है। इस ग्रन्थ से निम्न अवतरण विचारणीय हैं-

चित्रमूलोद्भवं सर्वं त्रैलोक्य सचराचरम्।
ब्रह्म विष्णुभवाद्याश्च सुरासुरनरोरगाः।।
स्थावरं जंगमं चैव सूर्यचन्द्रौ च मेदिनी।
चित्रमूलोद्भवं सर्वं जगत्स्थावरजंगमम्।।
(अपराजित-पृच्छा)

४. **मानवेत्तर प्रकृति का समन्वय तथा आदर्शवादिता**—भारतीय कलाकार सम्पूर्ण चेतन तथा अचेतन जगत को सृष्टि का अंग मानता है, इसी से उसकी रचनाओं में मानवीय तथा प्राकृतिक जगत का अनोखा रूप दिखाई पड़ता है। मानवी तथा दैवी प्राकृत-शक्तियों का निरूपण, पुरुष तथा नारी का समन्वय, कठोरता एवं कर्कशता, कोमलता एवं निर्मलता आदि के अनेक विरोधी अथवा पूरक तत्वों का भारतीय चित्रकला में समन्वय प्राप्त होता है। दुर्गा के रूप में नारीत्व, पवित्रता, वीरता तथा कोमलता का समन्वय दिखलाई पड़ता है। इसी प्रकार गणेश, हनुमान, गरुड़ आदि रूपों में मानव, पशु या पक्षी सुलभ रूक्षता आदि का समन्वय दिखाई पड़ता है। भारतीय चित्रों की पृष्ठभूमि में अनेक अलंकरणों या अभिप्रायों के रूप में प्राकृतिक वनस्पतियों, पेड़-पौधों, फूल-पत्तियों आदि की भव्य भावपूर्ण तथा सजीव छवि अंकित की गयी है। भारतीय कला में सौन्दर्य का आधार प्राकृतिक जगत से प्रेरित है, उदाहरणार्थ—नेत्रों की रचना कमल, मृग अथवा खंजन तथा भुजाओं की रचना मृणाल तथा मुख की रचना चन्द्र या कमल तथा अधरों की रचना बिम्बाफल के समान की गई है। चित्रकार ने जड़ तथा पशु में भी समान रूप से आत्मा दर्शाई है इसी कारण पशु में मानवीय भावना का ओज और मानवाकृतियों में दैवी या प्राकृतिक सौन्दर्य या ओज दिखाई पड़ता है।

भारतीय कलाओं का जन्म चक्षु की अपेक्षा मन या आत्मा के धरातल से होता है इसी कारण उसमें सांसारिक यथार्थ की अपेक्षा आत्मा की पवित्रता से अनुप्राणित आदर्श रूप ही अधिक है। भारतीय चित्रकार यथार्थ जगत में जैसा देखता है, वैसा चित्रित नहीं करता, बल्कि जैसा उसको होना चाहिए वैसा चित्रित करता है। वह उसको सत्य, शिव और सुंदर रूप प्रदान करता है इस प्रकार वह आदर्श रूप की रचना करता है।

५. **कल्पना**—भारतीय चित्रकला कल्पना के आधार पर ही विकसित हुई है, अतः उसमें आदर्शवादिता का उचित स्थान है। भारतीय मनीषियों ने प्रकृति तथा यथार्थ के ऊपर उठकर कल्पना के सहारे बाह्य-जगत तथा अन्तर्जगत की गहराइयों को खोजा। उन्होंने अनेक काल्पनिक देवी-देवताओं की कल्पना की—कल्पना का सर्वश्रेष्ठ रूप ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश के रूप में दिखाई पड़ता है। कल्पना का सर्वोत्तम उदाहरण नटराज रूप में विकसित हुआ। नटराज रूप में सृष्टि के सृजन, विनाश, जीवन तथा मरण का सजीव

भारतीय चित्रकला की विशेषताएँ

भारतीय चित्रकला तथा अन्य कलाएँ अन्य देशों की कलाओं से भिन्न हैं। भारतीय-कलाओं की कुछ ऐसी महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ हैं जो भारतीय-कलाओं को अन्य देशों की कलाओं से अलग कर देती हैं यह विशेषताएँ निम्न हैं–

१. **धार्मिकता**–भारतीय कलाओं का जन्म ही धर्म के साथ हुआ है और हर धर्म ने कला के माध्यम से ही अपनी धार्मिक मान्यताओं को जनता तक पहुँचाया है। इसी प्रकार भारतीय चित्रकला तथा शिल्प का लगभग तीन-चार हजार वर्षों से धर्म से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है अतः भारतीय चित्रकला में धार्मिक भावनाएँ पूर्ण रूप से समा गई और चित्रकला को धार्मिक महत्त्व के कारण ही धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष का साधन माना गया है। चित्रकला तथा अन्य कलाओं को परम-आनंद का साधन माना गया है।

२. **अन्तः प्रकृति से योगी या साधक की दृष्टि से अंकन**–भारतीय चित्रकला तथा अन्य शिल्पों में सांसारिक सादृश्य या बाहरी जगत की समानता का महत्त्व नहीं है बल्कि मनुष्य के स्वभाव या अन्तःकरण को गहराई तथा पूर्णता से दिखाने का अत्याधिक महत्त्व है। गहन-भावना या अन्तःकरण की इस छवि को चित्रकार योगों के समान प्रस्तुत करता है। जिस प्रकार भारतीय योगी ध्यान तथा स्मृति की अवस्था को प्राप्त करके बाहरी तथा आन्तरिक प्रकृति तथा प्रकृति के विस्तीर्ण क्षेत्र का एक ही स्थान पर बैठकर साक्षात्कार कर लेता है उसी प्रकार भारतीय चित्रकार भी एक स्थान से अनेक कालों एवं स्थानों अथवा क्षेत्रों की विस्तीर्णता को एक साथ ही ग्रहण करके व्यक्त कर देता है और इस प्रकार उसकी रचना में आकाश, पाताल तथा धरा की कल्पना एक साथ ही समाविष्ट हो जाती है। वह पाश्चात्य कलाकारों की भाँति दृश्य या आकृति के एक दर्शित पक्ष या स्थिति तक सीमित नहीं रहा है और न ही चाक्षुषपरिधि तक सीमित रहा है, उसने सदैव मन की आँख को खोलकर आकाशीय दृष्टि को धारण करके सृष्टि के रचयिता के समान ही एक कथा, घटना या चित्रित विषय को सम्पूर्ण रूप से एक ही चित्रपटी पर प्रस्तुत किया है। यही कारण है कि अजन्ता की विस्तीर्ण चित्रावलियों में जंगल, सरोवर, उद्यान, रंगमहल, पर्वत, प्रकृति तथा कथा के पात्र चित्रकार ने एक साथ ही एक दृश्य में अंकित कर दिए हैं। कलाकार ने चाक्षुष-सीमाओं से मुक्त होकर अनेक स्थितियों तथा पात्रों आदि को एक साथ अपने मानसिक परिप्रेक्ष्य के धरातल से प्रस्तुत किया है। भारतीय चित्रकला की इस विशेषता को आज यूरोप के कलाविद् भी मानने लगे हैं।

३. **योग पूजन**–योगी तो बिना चित्र या प्रतिमा के भी ब्रह्म-ध्यान एवं प्रभू-पूजन कर सकते थे परन्तु विशाल जन-समाज योगी नहीं होता, अतः इस दृष्टि को सामने रखकर हमारे आचार्यों ने स्पष्ट उद्घोष किया–

"अज्ञानां भावनार्थाय प्रतिमा परिकल्पिता।
सगुण-ब्रह्म-विषयक-मानस-व्यापार आसनन्।।"

मिर्ज़ापुर–विन्ध्याचल पर्वत की कैमूर शृंखलाओं में स्थित मिर्ज़ापुर जिले (उत्तर
प्रदेश) में एक सौ से अधिक चित्रित गुफायें तथा शिलाश्रय प्राप्त हुए हैं।

उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में कैमूर-पर्वत शृंखला के अन्तर्गत मिर्ज़ापुर जिले में
कोहबर, महड़रिया, भल्डरिया, विजयगढ़; छातों, विढ़म लिखनिया-१, लिखनिया-२,
लौहरी, खोड़हवा, रौंप, कंडाकोट, सोरहोघाट, घोड़मंगर, पभोसा (चुनार) आदि स्थान
आदिम मनुष्य के प्रमुख केन्द्र थे। मिर्ज़ापुर क्षेत्र में एक सौ से अधिक शिलाश्रय तथा
गुफाएँ इन्हीं स्थानों पर प्राप्त हुई हैं, जिनमें गुहावासी मानव की चित्रकला के प्रमाण
सुरक्षित हैं। मिर्ज़ापुर क्षेत्र के अन्तर्गत सहवाइयापथरी, मोहरापथरी, बागांपथरी, लकड़टपथरी
नामक पहाड़ियों में भी आदिम चित्रों के उदाहरण प्राप्त होने के उल्लेख प्रकाशित हुए हैं।
लिखनिया-१ में हाथियों के पकड़ने के दृश्यों को बड़ी सुंदरता से चित्रित किया गया है।
लिखनिया-२ में पशु आखेट के दृश्यों के साथ-साथ नर्तन-वादन में मस्त व्यक्तियों के समूह
भी अंकित किये गए हैं। यह चित्र गुफा की छतों तथा भित्तियों पर बनाये गए हैं। एक
अन्य स्थान पर लम्बी चोंच वाले पक्षी की आकृति भी बनाई गई है। विजयगढ़ गुफा में
तीन आदमियों को लाल, पीले तथा सफेद रंग से बनाया गया है। इसके अतिरिक्त
विजयगढ़ गुफा में सुअर, गैंडा, बारहसिंगा तथा हिरन आदि पशुओं का चित्रण किया गया
है। मिर्ज़ापुर क्षेत्र में स्थित गुफाओं के चित्रों में अधिक स्वाभाविकता और यथार्थता से
चित्रित पशुओं में गैंडा, सांवर, हिरन, सुअर तथा बारहसिंगा हैं। यह चित्र स्पेन की कोगुल
गुफा के चित्रों से आकार, चित्रण शैली तथा रेखांकन पद्धति में पर्याप्त समान दृष्टिगोचर
होते हैं। यहाँ पर एक सांबर के पकड़ने का दृश्य तथा दूसरा गैंडे के आखेट का दृश्य
मार्मिक ढंग से अंकित किया गया है। एक दृश्य में सुअर का आखेट (देखिये छाया फलक
संख्या-१) और दूसरे दृश्य में एक हिरन का आखेट अंकित किया गया है। इन्हीं आखेट
दृश्यों के साथ एक पशु पर कुत्तों का आक्रमण भी अंकित किया गया है। यहाँ एक स्थान
पर सुसज्जित द्वार पर एक चोंचदार पुरुष बैठा बनाया गया है जिससे प्रतीत होता है कि
यह गुफा एक तंत्र-मंत्र शाला है। इस क्षेत्र में अधिकांश चित्र गेरू, हिरौंजी या कोयले से
बनाये गए हैं। इन चित्रों से भारतवर्ष की आदिम चित्रकला का इतिहास ही प्राप्त नहीं
होता बल्कि पूर्वी देशों की प्राचीन सभ्यता के विकास पर भी प्रकाश पड़ता है।

रौंप तथा घोड़मगर गुफा में कॉकबर्न महोदय ने गैंडे के आखेट-दृश्य अंकित पाये थे।
घोड़मंगर गुफा में मगर तथा घोड़े के चित्र अंकित हैं। भल्डरिया में शिलाश्रयों तथा गुफाओं में
कॉकबर्न ने (१८८३ ई० में) अनेकानेक पशु-आखेट चित्र अंकित पाए। मिर्ज़ापुर के प्रसिद्ध
पिकनिक स्पॉट (स्थल) विढ़म में भी प्रागैतिहासिक चित्रकारी से युक्त शिलाश्रय प्राप्त हुआ है।
मिर्ज़ापुर क्षेत्र की परवर्ती चित्रकारी का समय ५,००० ई० पू० के अन्तर्गत माना जा सकता है।

मनिकापुर–मनिकापुर और उसके निकटवर्ती क्षेत्र में खुले स्थान में गेरु से बने हुए
कुछ चित्र प्राप्त हुए हैं। एक चित्र में पहियेरहित गाड़ी और तीन घोड़ों का अंकन है।

स्थापित कर ली थीं, जिनमें वह रंग को पत्थर की शिला के ऊपर घिसकर बनाता था और रंग बनाकर चित्र का निर्माण करता था। यहाँ पर जानवरों के पुट्ठों की हड्डी भी मिली है जिसको वह रंग बनाने की प्लेट या तस्तरी के रूप में प्रयोग करता था। विन्ध्याचल पर्वतमाला के अन्तर्गत अनेक क्षेत्रों में आदिमानव अपने केन्द्र बनाकर रहने लगा। इस प्रकार उत्तर-पाषाण युग की चित्रकला के प्रमाण विन्ध्या तथा कैमूर पर्वतमाला में अनेक स्थानों पर सुरक्षित हैं। इसमें प्रमुख चित्र-उदाहरण रायगढ़, मिर्ज़ापुर, पचमढ़ी होशंगाबाद, ग्वालियर, बांदा आदि क्षेत्रों में प्राप्त हुए हैं।

सिंहनपुर—सिंहनपुर के चित्रों की खोज १९१० ई० में डब्ल्यू० ऐण्डर्सन ने की, तत्पश्चात् पर्सी ब्राउन ने १९१७ ई० में और अमरनाथ दत्त ने १९१३ ई० में इन चित्रों का परिचय दिया। सिंहनपुर नामक ग्राम मध्य प्रदेश की रायगढ़ रियासत में मांढ नदी के पूर्वी किनारे पर स्थित है। सिंहनपुर ग्राम में ५० चित्रित शिलाश्रय तथा गुफाएँ मिली हैं। ये गुफाएँ एक रेतीली चट्टान में स्थित हैं। इनके द्वार पर कंगारू के असंयत चित्र बने हैं। सिंहनपुर के पास एक सुरंगनुमा गुफा में अधिक पशुओं का अंकन किया गया है—जिसमें घोड़ा, बारहसिंगा, हिरन, साही, महिष या अरना भैंसा, साँड, सूंड उठाये हाथी तथा खरगोश आदि जानवरों का सजीव अंकन है। यहाँ पर एक गुफा में दीवार पर जंगली साँड को पकड़ते हुए और बर्छी से छेदते हुए आखेटकों का एक बड़ा मार्मिक दृश्य चित्रित किया गया है। इस चित्र में कुछ आखेटक चारों ओर से हिंस्र पशु को घेर रहे हैं और कुछ प्रबल पशु की खीस से वायु में उछल गये हैं और कुछ पृथ्वी पर गिर पड़े हैं। इस चित्र में पशु तथा आखेटकों की भयंकरता तथा गति का मार्मिक अंकन किया गया है।

उसी दीवार पर एक दूसरा चित्र अंकित किया गया है जिसमें एक घायल भैंसा बुरी तरह तीरों से विंधा हुआ दम तोड़ रहा है, उसके चारों ओर भालों आदि से सुज्जित शिकारियों का दल है। इस चित्र में प्राण त्यागते हुए भैंसे को आदिम चित्रकार ने बड़ी सफलता से सरल तथा साधारण आकारों में बाँध दिया है। इन चट्टानों के निचले भाग में बहुत से पत्थर के औज़ार तथा हथियार प्राप्त हुए हैं, जिससे इन गुफाओं को उत्तर-पाषाण युग का मानने में कोई संदेह नहीं रह जाता। इन चित्रों को देखकर स्पष्ट हो जाता है कि प्रागैतिहासिक मनुष्य में चित्रण के लिए एक प्रकृति-प्रदत्त प्रेरणा थी। उसने इन चित्रों में प्रभावशाली ढंग से गेरुये रंग की तूलिका के द्वारा अपने कौतूहलपूर्ण विचारों को पिरोया है। ऐण्डर्सन तथा पर्सी ब्राउन महोदय के पश्चात् गॉर्डन द्वारा सिंहनपुर का विवरण विशद शब्दों में प्रस्तुत किया गया। इसी क्षेत्र में कबरा पर्वत, करमागढ़, खैरपुर तथा बोतालदा में अनेक शिलाश्रय तथा गुफाएँ प्राप्त हुई हैं, जिनमें गुहावासी मानव के चित्र प्राप्त हुए हैं। यहाँ पर क्षेपांकन (Stencil) पद्धति में चित्र बनाये गए हैं। इन चित्रों को गॉर्डन ने पर्याप्त परवर्ती माना है परन्तु जादू के विश्वास के प्रचलन के प्रतीक चिन्हों का यहाँ पर चित्रण किया गया है जिससे यह प्राचीन सिद्ध होते हैं।

अपने शरीर भी ढकता था। सुअर, हाथी, गैंडा तथा बारहसिंगा आदि के डील-डौल शक्ति से भी वह प्रभावित हुआ होगा। अतः पशु और पशुओं के आखेट-दृश्य तथा जा विश्वास के प्रतीक चिन्हों का चित्रण इस समय की कला का प्रधान विषय है। यही का है कि उसके द्वारा चित्रित दौड़ती, उछलती, गिरती और प्रहार करती हुई आखेटकों की खींस मारते हिंस्र-पशुओं या आक्रमण करते हुए गतिशील पशुओं की आकृतियों में अत्यधि सजीवता है। इन चित्रों में मानव ने अपने भावों को सरलतम रूपों तथा ज्यामितीय आका में संजोया है। यह कृतियाँ आदिम मानव की बाल-सुलभ प्रकृति की उत्तम झाँकी हैं। इन चि में प्रागैतिहासिक युग के मनुष्य का सम्पूर्ण इतिहास संचित है। इन चित्रों की सीमा रेखा सशक्त एवं गतिशील हैं, यद्यपि चित्र असंयत और सरल हैं।

प्रागैतिहासिक काल के चित्रों की विशेषताएँ तथा मूल प्रवृत्तियाँ

चित्रों का विधान-प्रागैतिहासिक काल के चित्रों के समस्त चित्र उदाहरण लाल, काले या पीले और सफेद रंगों से बने हैं। यह चित्र चट्टानों की दीवारों, गुफाओं के फर्शों, भित्तियों या छतों में बनाये गए हैं। अनेक चित्र प्रस्तर शिलाओं पर भी अंकित किये गए हैं। यह चित्र चट्टानों की खुरदरी दीवारों पर लाल (गेरू या हिरौंजी), काले (कोयला, काजल या कालिख) या सफेद (खड़िया) रंगों को पशु की चर्बी में मिलाकर बनाये गए हैं। इन चित्रों में रेखा या सीमारेखा की प्रधानता है, इस कारण इनको रेखा-चित्र मानना संगत है। आकृति की सीमारेखा को अधिकांश किसी नुकीले पत्थर से खोदकर बनाया गया है जिससे वह वर्षा के जल से धुल न जाये और स्थायी बनी रहे। सामान्यतया दो-तीन रेखाओं के द्वारा मानव आकृतियों का निर्माण किया गया है और कभी-कभी चौखूटे धड़ से मनुष्य की आकृति बनाई गई हैं जिसमें कभी तिरछी और कभी पड़ी रेखायें भर दी गई हैं।

रंग तथा आकार-इन चित्रों में रंग का प्रयोग बाल-सुलभ प्रकृति के आधार पर किया गया है। आकृति को भरने के लिए धरातल पर रंगों को सपाट लगाया गया है। इन चित्रों में सुगमता से प्राप्त खनिज रंगों का प्रयोग किया गया है। इन रंगों में प्रधानता गेरू, हिरौंजी, रामरज तथा खड़िया के रंगों का प्रयोग है। इन रंगों के अतिरिक्त रासायनिक रंगों में कोयला या काजल का प्रयोग किया गया है। अधिकांश आकृतियों के निर्माण में सीधी रेखा, वक्र और आयत आदि ज्यामितीय आकारों का प्रयोग है। कई ज्यामितीय आकारों को सांकेतिक रूप में भी प्रयोग किया गया है, जिसमें स्वास्तिक, त्रिभुज, वृत्त, षटकोण तथा आयताकार हैं। सम्भवतः इन आकारों से प्रकृति की विभिन्न शक्तियों या जादू-टोने के विश्वासों को व्यक्त किया गया है। अधिकांश चित्रों को रेखाओं के द्वारा बनाया गया है अन्यथा पूर्ण रूप से या पूरक रूप में क्षेपांकन (Stencil) पद्धति का प्रयोग किया गया है।

यद्यपि यह चित्र भद्दे, असंयत और कठोर हैं परन्तु इनमें गति तथा सजीवता है और तूलिका संचालन की शक्ति इनकी प्रमुख विशेषता है।

भी निवास करती हैं और अब भी इस प्रकार के चित्र बनाती हैं, परन्तु अनेकानेक स्थानों पर खरोष्ट लिपि में लेख उत्कीर्णित रहने के कारण इनको हम परवर्तीकाल का नहीं मान सकते। खरोष्ट लिपि बहुत प्राचीन है, इसके अतिरिक्त जो पशु तथा शस्त्र वहाँ अंकित किये गए हैं वह भी पाषाण-युग के हैं। अतः गॉर्डन का मत ठीक नहीं है और यह चित्र प्राचीन हैं। ब्राड्रिक महोदय ने संसार के प्रागैतिहासिक चित्रों की प्राचीनता का विवेचन करते हुए भारत में प्राप्त चित्रों को कालक्रम में अमेरिका तथा यूरोप के बाद रखा है।

प्रागैतिहासिक चित्रों का उद्देश्य

पाषाण-युग के मनुष्यों ने अपने चारों ओर के वातावरण की स्मृति को बनाये रखने के लिए तथा अपनी विजय का इतिहास व्यक्त करने की भावना के वशीभूत होकर इन चित्राकृतियों का निर्माण किया। गुहावासी मानव ने अपनी अमूर्त भावना को मूर्त रूप प्रदान करने की प्रवृत्ति के कारण जिसमें जादू टोना-टोटका आदि भी आ जाते हैं, अधिकांश चित्रों की रचना की। मूलतः ये ही मनोवृत्तियाँ सम्पूर्ण मानव जाति की उन्नति की प्रेरक हैं।

इन चित्रों में आदिमानव का दैनिक जीवन परिलक्षित होता है। आखेट करने से पूर्व आदिम आखेटक पशु का चित्र बनाकर और उस पर कुछ जादू-टोना करके अपने आखेट की सफलता में विश्वास करता था। उसका विश्वास था कि जिस पशु को वह चित्ररूप में अंकित करता था वह उसके वश में सरलता से आ जाता था। प्रायः ऐसे चित्र मिले हैं जिनमें तीरों, बर्छों या भालों से बिंधे पशु अंकित किये गए हैं। कदाचित आखेट के लिए प्रस्थान से पूर्व आदिम-आखेटक अनेक आखेटक समूहों को चित्रित आहत-पशु के चित्र के सहारे पशु के अनेक अंगों पर आक्रमण तथा प्रहार करने की शिक्षा देता था प्रदर्शन करता था। इस समय पशु को मारकर खाना तथा उसके बाद उल्लास में नर्तन-गायन आदि करना मनुष्य की दिनचर्या थी, यही सब उत्तर-पाषाण युग के चित्रों में दिखाई पड़ता है। गुहावासी मानव ने अपनी सफलता के लिए अदृश्य शक्तियों की पूजा—स्वास्तिक, षटकोण, अंकों तथा रेखाओं आदि अनेक प्रतीक चिन्हों के अंकन के रूपों को टोना-टोटका मानकर आरम्भ कर दी थी।

चित्रों का विषय

आदिम मनुष्य का दृष्टिकोण भयानक पशुओं की दौड़-भाग, उछल-कूद तथा वेदना के चित्रण या अपने दैनिक जीवन के कार्य-कलापों के अंकन तक ही सीमित रहा। अतः उसने सांबर, बारहसिंगा, महिष, गैंडा, हाथी, घोड़ा, खरगोश, सुअर जैसे पशुओं का स्वाभाविकता के साथ अंकन किया है। यह पशु उसने अपने आखेट में देखे थे और उसने उनका पीछा करते हुए उनमें दैत्य जैसी शक्ति का अनुभव किया था। इन पशुओं की गति और शक्ति पर उसने विजय प्राप्त की थी, इस कारण उसके प्रमुख चित्रण विषय के रूप में पशु जीवन का आना स्वाभाविक था। पशुओं के माँस से उसकी उदर-क्षुधा भी मिटती थी और उनकी खाल से वह

भोपाल क्षेत्र—भोपाल क्षेत्र में धरमपुरी, गुफामंदिर, शिमलाहिल, बरखेड़ा, सा सेक्रेटरियेट, उदयगिरि आदि स्थानों में आदिम-चित्रकला के उदाहरण प्राप्त हुए हैं। धरमपु नामक स्थान पर एक शिलाश्रय में गेरुए रंग से अंकित हिरन के आखेट का रहस्य चित्रण है। इस चित्र में शिकारी का शरीर पैरों तक पत्तियों से ढके होने के कारण प्रभ हिरन उनके समीप आ गया अंकित किया गया है।

बांदा—बांदा क्षेत्र में सरहत, मलवा, कुरियाकुंड, अमवों, उल्दन, चित्रकूट आ स्थानों में शिलाश्रय तथा चित्रित गुफाएँ प्राप्त हुई हैं।

ग्वालियर क्षेत्र—ग्वालियर, शिवपुरी तथा फतेहपुर सीकरी के आस-पास भ आदिम-चित्रकला के चिन्ह प्राप्त हुए हैं।

बिहार—बिहार क्षेत्र में चक्रधरपुर नामक ग्राम में आदिम-चित्रकला के कुछ उदाहरण प्राप्त हुए हैं। एक चित्र में एक आदमी लेटा है और कुछ आदमी उसके पास बैठे हैं। यहाँ के चित्रों का समय श्रीमती अल्चिन तथा असित कुमार हाल्दार ने २,००० ई० पूर्व माना है।

मन्दसौर—मन्दसौर जिले में मोरी गाँव में गुफा-चित्र प्राप्त हुए हैं। यहाँ ३० खोहे हैं जिनमें सूर्य, कमल तथा स्वास्तिक चिन्ह बने हैं।

भीमबेटका—मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल से लगभग ४० कि०मी० दक्षिण में भीमबेटका नामक एक पहाड़ी में लगभग ६०० प्राचीन गुफाएँ प्राप्त हुई हैं। इन गुफाओं में प्रस्तर सामग्री भी प्राप्त हुई है जो ३०,००० ई० पूर्व से १०,००० ई० पूर्व की है। यहाँ पर लगभग २७५ गुफाओं में चित्रों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। यहाँ पर बने चित्रों का समय लगभग १०,००० ई० पूर्व से १,००० ई० पूर्व तक का माना गया है। भीमबेटका होशंगाबाद से भोपाल की ओर जाने वाली रेल लाईन पर बरखेड़ा तथा उब्बेदुल्लागंज स्टेशनों के मध्य में स्थित है। यह स्थान मियाँपुरमु (भीमपुरा) नामक आदिवासी गांव से दो कि०मी० की दूरी पर स्थित है। यहाँ पर हिरण, बारहसिंगा, सुअर, रीछ, भैंसे आदि जंगली पशुओं के चित्र अंकित हैं। परवर्ती चित्रों में आखेटक, कृषक, ग्वाले आदि चित्रित किये गए हैं।

इन स्थानों के अतिरिक्त बेला स्टेशन जो पटना से आठ मील की दूरी पर स्थित है, की पहाड़ियों में सुदामा, लोमश, रामाश्रय, विश्व झोपड़ी तथा गोपी गुफाओं की चित्रकला भी प्रागैतिहासिक महत्त्व की मानी गई है। भुवनेश्वर से पांच मील पश्चिम में स्थित उदयगिरि, खण्डगिरि और नीलगिरि की ६६ गुफाओं को चित्रों की दृष्टि से प्राचीन माना गया है। इसी प्रकार कश्मीर की सुप्रसिद्ध अमरनाथ गुफा में भी चित्रों के अवशेष मात्र रह गये हैं।

भारतवर्ष में जो चित्र प्राप्त हुए हैं उनमें से अधिकांश चित्रों का समय दस या बारह हजार वर्ष ईसा पूर्व से सात या आठ सौ वर्ष ईसा पूर्व अनुमान किया जाता है। गॉर्डन महोदय ने इन चित्रों को बहुत परवर्ती काल का मानने का प्रयंत्न किया है और उन्होंने पूर्वाग्रह के कारण इन चित्रों का समय आठवीं शताब्दी ईसापूर्व स्वीकार किया है, परन्तु यह बात ठीक नहीं प्रतीत होती है। यह बात सत्य है कि इन क्षेत्रों में आदिम जातियाँ अभी

✓ **पचमढ़ी**—पचमढ़ी क्षेत्र के चित्रों को प्रकाश में लाने का श्रेय डी० एच० गार्डन नामक विद्वान को है। १९३९ ई० में उन्होंने पचमढ़ी के चित्रों के सम्बन्ध में रेखाचित्रों तथा फलक चित्रों सहित एक विशद लेख प्रकाशित किया। पचमढ़ी भोपाल (मध्यप्रदेश की राजधानी) से लगभग सत्तर किलोमीटर की दूरी पर मध्य प्रदेश राज्य में ही स्थित है। यहाँ गुहावासी मानव की चित्रकारी के अनेक उदाहरण प्राप्त हुए हैं। इस क्षेत्र की चित्राकृतियों के विवरण-लेखन का श्रेय डी० एच० गार्डन महोदय को प्राप्त है। यहाँ पर उन्होंने पन्द्रह से अधिक शिलाश्रयों एवं गुफाओं की खोजबीन की है। यहाँ पर महादेव-पर्वत के चारों ओर अवस्थित डोरोकोदीप, महादेव बाजार सोनभद्रा, जम्बूदीप, निम्बुभोज, बनियांबेरी, मारोदेव, तामिया और झालई आदि स्थानों में अनेक चित्रित शिलाश्रय तथा गुफाएँ प्राप्त हुई हैं। पचमढ़ी के शिलाचित्रों में पशु तथा आखेट चित्रों के अतिरिक्त सशस्त्र-युद्धदृश्यों के चित्र तथा नर्त्तन-वादन के कार्यक्रमों के चित्र भी मिलते हैं। यहाँ पर 'बाजारकेव' में एक विशालकाय बकरी का चित्र है। इस क्षेत्र में माँडादेव गुफा की छत में 'शेर के आखेट' का एक दृश्य अंकित है। इस क्षेत्र में इमली खोह में सांवर के आखेट का दृश्य है। इस क्षेत्र में चट्टानों पर पशु की पंक्तियों के अंकन के साथ-साथ दैनिक जीवन के चित्र भी अंकित किये गए हैं—जैसे अनेकानेक चित्रों में गायों को चराते हुए चरवाहे और शहद इकट्ठा करते हुए मनुष्य दिखाये गए हैं। विषय, आकार और प्रकार के आधार पर पचमढ़ी क्षेत्र के अधिकांश चित्र पर्याप्त परवर्ती प्रतीत होते हैं। गार्डन ने यह चित्र भारत की निषाद जाति की उन्नतकालीन संस्कृति के परिचायक माने हैं और उनहोंने इन चित्रों का समय ईसवी शताब्दी से बहुत परवर्ती माना है।

✓ **होशंगाबाद**—होशंगाबाद नगर (मध्य प्रदेश) पचमढ़ी से पैंतालीस मील दूर नर्मदा नदी पर स्थित है। इस नगर से इटारसी जाने वाले मोटर मार्ग पर ढाई-तीन मील की दूरी पर आदमगढ़ पहाड़ी है। इसी पहाड़ी में एक दर्जन से अधिक शिलाश्रय हैं जिनमें हाथी, महिष, घोड़े, सांवर, जिराफ-समूह, अस्त्ररोही अश्वारोही, चार धनुरधारी आदि क्षेपांकन (Stencil) पद्धति से बनाये गए हैं। यहाँ पर विभिन्न शैलियों में किये गए चित्रण-प्रयोगों के पाँच-छः स्तर हैं जो अनेकानेक कालों के द्योतक हैं। इस क्षेत्र में पुरातत्व विभाग की ओर से उत्खनन किया गया है जिससे पाषाण-युगों से सम्बद्ध आदिम-मानव के निवास के चिन्ह प्रकाश में आने की अधिक संभावना है। आदमगढ़ की एक गुफा में एक हाथी पर चढ़े आखेटकों को जंगली भैंसे का आखेट करते हुए चित्रित किया गया है। यहाँ पर कुछ आखेटक घोड़ों पर सवार चित्रित हैं और कुछ पैदल दौड़ रहे हैं (देखिये छाया फलक-२) डॉ० जगदीश गुप्त ने इस क्षेत्र में बुदनी तथा रहेली का नाम भी प्रागैतिहासिक चित्रकला के लिए प्रस्तुत किया है। यहाँ पर एक शिलाश्रय पर एक मोर का विशाल चित्र अंकित है और एक स्थान पर वनदेवी का चित्र अंकित है।

और एक देवदर्शनी या देवदासी देवता की सेवा में यहाँ रहती थी। डॉ० ब्लाख के अनुसार इस गुफा के लेख तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व के हैं। यहाँ के चित्रों की रचना-शैली समकालीन भरहुत और साँची की मूर्तिकला से मिलती-जुलती है, इस कारण इन चित्रों का सम्भावित समय दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व (मौर्य काल) है, परन्तु यह चित्र किसी प्रकार से भी प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व के बाद के नहीं हैं। १६१४ ई० पू० में स्व० असित कुमार हाल्दर तथा क्षेमेन्द्र नाथ गुप्त ने जोगीमारा के चित्रों का अध्ययन किया और इनके सम्बन्ध में विवरण प्रस्तुत किये।

इस गुफा के भित्तिचित्र ऐतिहासिक काल की भारतीय चित्रकला के प्राचीनतम उदाहरण हैं। सूक्ष्मता से देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि इन चित्रों को पुनः ऊपर से रंग भरकर सुधारने की निष्फल चेष्ट की गई है। ऊपर से लगाये गए रंग तथा रेखाएँ अलग दिखायी पड़ती हैं। इस गुफा के चित्रों के विषय बहुत रोचक हैं। यह गुफा बहुत संकरी और छोटी है। इसकी लम्बाई दस फुट और चौड़ाई तथा ऊँचाई छः-छः फुट है और छत को एक आदमी खड़ा होकर सरलता से छू सकता है, इस कारण बहुत से चित्र नष्ट हो गए हैं। यहाँ पर सर्वप्रथम छत पर पलास्तर चढ़ाकर विधिवत् भित्तिचित्रण प्रणाली में चित्र बनाये गए हैं। यहाँ पर पशु-पक्षी, स्त्री-पुरुष, मकान, तालाब पुष्प आदि का अंकन श्वेत, लाल तथा काले रंग से किया गया है। इन चित्रों से उस समय की विकसित सभ्यता का ज्ञान होता है। कुछ विद्वानों ने इन चित्रों की परम्परा को ही अजंता की आरंभिक भित्तिचित्रण शैली का प्रेरक माना है। यह गुफा-चित्र वैदिक काल के अन्तर्गत आ जाते हैं।

जोगीमारा गुफा के चित्र

स्व० असित कुमार हाल्दर ने इस गुफा में प्राप्त सात चित्रों के खण्डित अवशेषों का वर्णन दिया है। कुछ लेखकों ने सातवें चित्र को दो भागों में बाँटा है। इस प्रकार उन्होंने आठ चित्र माने हैं। यह चित्र ऐकेन्द्रिक वृत्तों में बनाये गए हैं। सर्वप्रथम भारतीय चित्रकला में जोगीमारा की गुफा में छतों पर बने चित्रों के उदाहरण प्राप्त होते हैं और भित्तिचित्रों की निर्माण तकनीकी का श्रीगणेश या नवीन अध्याय इसी गुफा में आरंभ होता है।

जोगीमारा के भित्तिचित्र

(१) इस दृश्य में कुछ आदमियों की आकृतियाँ तथा हाथियों के चित्र अंकित किये गए हैं। इस दृश्य में नदी के जल का अंकन लहरदार रेखाओं से किया गया है। जल में एक बड़ी सील मछली बनायी गई है। कदाचित यह मछली नहीं मगर है और यह चित्र गज-ग्रह की पौराणिक कथा से सम्बन्धित है।

(२) इस चित्र में कुछ व्यक्ति एक वृक्ष के नीचे बैठे विश्राम कर रहे हैं। इस वृक्ष में केवल तीन-चार डालियों में एक-दो पत्तियाँ हैं जो लाल रंग से बनायी गई हैं वृक्ष का तना मोटा तथा सरल है।

(३) इस चित्र में सफेद पृष्ठभूमि पर काली रेखाओं के द्वारा एक बाग का दृश्य अंकित किया गया है। इस चित्र में लाल लिली (कुमुदिनी) के पुष्प बनाये गए हैं। एक युगल इन पुष्पों के ऊपर नृत्य कर रहा है। यह युगल लाल रंग से बनाया गया है।

(४) इस चित्र में गुड़िया जैसे बौने आकार के अनुपात रहित मनुष्य चित्रित हैं। इस चित्र में एक मनुष्य के सिर पर चोंच बनायी गई है। बौने के अंकन की परम्परा भारतीय मूर्ति तथा चित्रकला में बहुत प्राचीन है।

(५) इस दृश्य में एक स्त्री लेटी है (सम्भवतः नर्तकी है) और उसके चारों ओर गायन-वादन में रत कुछ अन्य मानव आकृतियाँ पाल्थी मारे बैठी बनायी गई हैं। इन चित्रों की रेखाएँ अजंता के आरंभिक चित्रों के समान हैं।

(६) इस चित्र में प्राचीन ढंग के रथों जैसे चैत्यों का अंकन दिखाई पड़ता है।

(७) इस दृश्य में ग्रीक रथों के समान भवन बनाये गए हैं। यह चित्र तथा इसके आगे का अधिकांश भाग नष्ट हो गया है। अतः अधिक अनुमान लगाना कठिन है।

डॉ० ब्लाख तथा विंसेंट स्मिथ ने इन्हीं चित्रों का वर्णन भिन्न-भिन्न प्रकार से प्रस्तुत किया है। स्मिथ ने सम्पूर्ण चित्रों में से चार सबसे अधिक सुरक्षित चित्रों का वर्णन दिया है जो निम्न प्रकार से है—

(अ) केन्द्र में एक वृक्ष के नीचे पुरुषाकृति बैठी बनायी गई है, उसके साथ में नर्तकियाँ तथा गवैये बायीं ओर बैठे बनाये गए हैं। दाहिनी ओर एक जुलूस बनाया गया है जिसमें एक ही हाथी चित्रित है।

(ब) इस पैनल में कई पुरुषाकृतियाँ, एक रथ का पहिया या चक्र और ज्यामितिक अलंकरण अभिप्राय बनाये गए हैं।

(स) इस पैनल के आधे भाग में केवल अस्पष्ट पुष्पों, घोड़ों और वस्त्रधारी पुरुषों के चिन्ह हैं। पैनल के दूसरे आधे भाग में वृक्ष है जिस पर एक चिड़िया बैठी है और एक नग्न लड़का उसकी शाखाओं में है। इस पेड़ के चारों ओर अनेक नग्न आकृतियाँ जमा हैं जिनके बाल सिर के बायीं ओर कसकर गाँठ में बँधे हुए बनाये गए हैं।

(द) इस पैनल के आधे ऊपरी भाग में एक नग्न पुरुषाकृति पाल्थी मारे बैठी बनायी गई है और तीन वस्त्रधारी पुरुष खड़े हैं। इसी प्रकार की दो अन्य बैठी आकृतियाँ और एक ओर तीन खड़ी आकृतियाँ बनायी गई हैं। नीचे की ओर एक मकान है जिसमें नाल-आकार की चैत्य जैसी खिड़की का प्रयोग है। इस मकान के सामने एक हाथी तथा तीन वस्त्रधारी पुरुष खड़े बनाये गए हैं। इस दल के पास तीन घोड़ों का रथ है जिसमें छत्र लगा है और दूसरा हाथी एक परिचारक सहित खड़ा है। इस पैनल के दूसरे आधे भाग में इसी प्रकार की आकृतियाँ हैं।"

जोगीमारा की गुफा में तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व के और कुछ बाद के लेख हैं। अतः यह चित्र भी प्राचीन मानना चाहिए परन्तु इन चित्रों का समय पाश्चात्य विद्वान

विवाह संस्कार सम्पन्न कर दिया जाता था। महाभाष्य में भी कृष्ण लीला के चित्रों का उल्लेख आया है।

उम्मग जातक—'उम्मग जातक' में भी चित्रों का यथोचित वर्णन है। इन चित्रों का उल्लेख सभामंडपों, राजप्रसादों एवं चित्रित सुरंगों या चित्रगारों के सम्बन्ध में आया है। उम्मग जातक में एक चित्रागार का वर्णन है जिसमें चतुर चितेरों ने इन्द्र, सुमेरू, चारों महाद्वीप, समुद्र, हिमालय, सूर्य, चारों दिग्पालों, सरोवर तथा सात भुवनों इत्यादि के चित्र बनाये थे, इस कारण यह गुफा देवताओं की सभा सुधर्मा के समान प्रतीत होती थी।

तारानाथ के उल्लेख—सोलहवीं शताब्दी के तिब्बती बौद्ध इतिहासकार लामा तारानाथ ने भारत के कला-कौशल को बहुत प्राचीन माना है और भगवान बुद्ध से पूर्व का बताया है। बुद्ध का जन्म ५५७ ई० पूर्व तथा मृत्यु का समय ४७७ ई० पूर्व माना जाता है। इस समय भित्ति-चित्रण की कला में विकास हुआ। इस कला को देवताओं की कला माना गया है। 'यक्ष' चित्र बनाया करते थे। यक्ष शब्द का साहित्यिक अर्थ है 'दिव्य व्यक्ति या आत्मा'। यह कलाकार दैवी प्रेरणा से प्रेरित थे और इन चित्रकारों को अशोक ने ईसा से दो सौ वर्ष पूर्व अपने महलों के अलंकरण हेतु नियुक्त किया। बाद में २०० ई० पूर्व में नागार्जुन की अध्यक्षता में नागा चित्रकारों ने चित्र बनाये। यक्ष कलाकारों को देवता और नागा कलाकारों को अर्ध-मानव तथा अर्ध-देवता माना गया है। आज भी भारतवर्ष के कारीगर (शिल्पी) अपने आप को किसी न किसी देवता का वंशज मानते हैं। अधिकांश उच्च स्तर के शिल्पी अपने लिये विश्वकर्मा की संतान मानते हैं।

वात्स्यायन का कामसूत्र—जिस समय भारतीय कला का सर्वांगीण विकास हो रहा था उसी समय चित्रकला के 'षडंग भेद' का वात्स्यायन ने अमूल्य ग्रंथ 'कामसूत्र' में विवेचन किया। 'कामसूत्र' ६००-२०० ई० पू० की रचना है। इसके तीसरे-अध्याय में ६४ कलाओं का उल्लेख किया गया है और आलेख्य या 'चित्रकला'-के षडंग पर भी प्रकाश डाला गया है। यह ६४ कलाएँ सभी नागरिकों को जानना चाहिए। इन कलाओं की सूची निम्न प्रकार है—

(१) संगीत, (२) वाद्य-वादन, (३) नृत्य, (४) चित्रकारी, (५) पत्तियों को काटकर आकृतियाँ बनाना या तिलक लगाने के लिये साँचे बनाना, (६) पूजन के लिये जौ, चावल तथा पुष्पों को सजाना, (७) कक्षों तथा भवनों को पुष्पों से सजाना, (८) दाँत, वस्त्र और शरीर को रंगना, (९) फर्श को मणि-मोतियों से जटित करना, (१०) शैय्या सजाना, (११) पानी में ढोलक जैसी ध्वनि उत्पन्न करना, (१२) पानी की चोट मारना या पिचकारी चलाना, (१३) विचित्र औषधादिकों का प्रयोग, (१४) चढ़ाने तथा पहनाने के लिये पुष्प मालाएँ बनाना, (१५) शेखरक तथा अपीड़ आभूषणों को यथा स्थान धारण करना, (१६) अपने शरीर को पुष्पों तथा अलंकारों से सुज्जित करना, (१७) शंख, हाथी-दाँत के कर्ण-आभूषण गढ़ना, (१८) सुगंधित धूप बनाना, (१९) आभूषण तथा अलंकार धारण करने की कला, (२०) इन्द्रजाल, (२१) बल-वीर्य वृद्धि के लिये औषधि आदि बनाना, (२२) हाथ की सफाई दिखाना, (२३) अनोखे भोजन शाक, रस,

मिष्ठान आदि बनाना, (२४) नाना प्रकार के पेय रस बनाना, (२५) सुई के कार्य में दक्षता, (२६) सूत कातना, (२७) वीणा डमरू आदि वाद्यों को बजाना, (२८) पहेलियाँ पूछना, (२९) श्लोक पाठन की रीति, (३०) कठिन अर्थ और जटिल उच्चारण वाले वाक्यों का पाठन, (३१) ग्रंथ का वाचन, (३२) नाटकों तथा अख्यायिकायों (कहानियों) में निपुणता, (३३) समस्या पूर्ति, (३४) छोटे उद्योगों में निपुणता, (३५) लकड़ी या धातु आदि की वस्तु बनाना, (३६) बढ़ईगीरी, (३७) वस्तु विद्या, (३८) सिक्कों तथा रत्नों की परख, (३९) धातु मिश्रण तथा शोधन कला, (४०) मणि, स्फटिक आदि रंगने की विधि का ज्ञान, (४१) वृक्ष तथा कृषि-विद्या, (४२) भेड़े, मुर्गे तथा तीतरों की लड़ाई कराने की विधि, (४३) शुकसारिका को बोलना सिखाना, (४४) शरीर दबाने का कौशल तथा केश मलना, (४५) अक्षरों को संबद्ध करना और अर्थ निकालना, (४६) सांकेतिक वाक्य रचना, (४७) देश-विदेश की भाषाओं का ज्ञान, (४८) शकुनों का ज्ञान, (४९) पुष्पों की गाड़ी बनाना, (५०) कलें बनाना, (५१) स्मृति को प्रखर बनाने की कला, (५२) स्मृति-ध्यान सम्बन्धी कला, (५३) मन से श्लोकों तथा पदों की पूर्ति, (५४) काव्य, (५५) कोष तथा छन्द ज्ञान, (५६) काव्य अलंकार का ज्ञान, (५७) रूप और बोली का छल, (५८) वस्त्रों से गुप्तांग को छिपाना, (५९) विशेष जुआ, (६०) पासों का खेल, (६१) बाल क्रीड़ा, (६२) विनयपूर्वक शिष्टाचार प्रदर्शित करना, (६३) विजय की विद्या, (६४) व्यायाम, आखेट आदि की विद्याएँ।

कामसूत्र के उपसंहार भाग में एक श्लोक से स्पष्ट है कि वात्स्यायन ने अपने से पूर्व के शास्त्रों का संग्रह करके और शास्त्रोक्त विधाओं के प्रयोग का पालन करके बड़े यत्न से उनको संक्षेप में 'कामसूत्र' नामक ग्रंथ में प्रस्तुत किया। इससे स्पष्ट है कि यह ६४ कलाओं की तालिका तथा चित्र रचना के सिद्धान्त उस समय के समाज में प्रचलित थे, जिन ग्रंथों के आधार पर 'कामसूत्र' की रचना की गई, वे सभी आज लुप्त हो चुके हैं।

चित्रकला के छः अंग—जयपुर नरेश जयसिंह प्रथम की सभा के राजपुरोहित पंडित यशोधर ने ग्यारहवीं शताब्दी में 'कामसूत्र' की टीका 'जयमंगला' नाम से प्रस्तुत की। 'कामसूत्र' के प्रथम अधिकरण के तीसरे अध्याय की टीका करते हुए यशोधर ने आलेख्य या शिल्प (चित्रकला) के छः अंग षडंग बताये हैं जो निम्न हैं—

शिल्प के षडंग (Six Limbs of Painting)

(१)	रूपभेद	—	(दृष्टि का ज्ञान)
(२)	प्रमाण	—	(ठीक अनुपात, नाप तथा बनावट)
(३)	भाव	—	(आकृतियों में दर्शक को चित्रकार के हृदय की भावना दिखाई दे)
(४)	लावण्ययोजना	—	(कलात्मकता तथा सौन्दर्य का समावेश)
(५)	सादृश्य	—	(देखे हुए रूपों की समान आकृति)
(६)	वर्णिकाभंग	—	(रंगों तथा तूलिका के प्रयोग में कलात्मकता)

कामसूत्र में उपरोक्त छः अंगों को निम्न श्लोक में प्रस्तुत किया गया है—

श्लोक— रूपभेदाः प्रमाणानि भाव, लावण्ययोजनम्।
सादृश्यं वर्णिकाभंग इति चित्रं षडंगकम्।।
(कामसूत्र)

प्राचीन भारतीय कला में इन छः अंगों का पालन आवश्यक समझा जाता था। अजंता, बाघ आदि की चित्रकारी में चित्रकला के इन छः अंगों या षडंगों का पालन किया गया है। कला सिद्धान्तों के अनुसार षडंगों का ठीक प्रदर्शन किये बिना चित्र निर्जीव रहता है। इन छः अंगों का संक्षेप में विवेचन इस प्रकार है—

१. **रूपभेद**—प्रत्येक आकृति में ऐसी भिन्नता या चारित्रिक विशेषता प्रदर्शित होनी चाहिए कि जिससे अमुक व्यक्ति की आकृति को पहचाना जा सके। जिस विशेषता या गुण के द्वारा आकृति में सत्य की अभिव्यक्ति हो उसी गुण का नाम 'रूप' है। जैसे माता के रूप से माता और धाया के रूप से धाया का आभास हो तब ही रूप रचना सार्थक और सत्य होगी।

रूप साक्षात्कार आत्मा तथा आँखों दोनों के द्वारा किया जा सकता है। चक्षुओं के द्वारा हम किसी वस्तु की लम्बाई, चौड़ाई, छोटापन, मोटापन, पतलापन, सफेदी या कालेपन का ज्ञान प्राप्त करते हैं किन्तु उस वस्तु में निहित व्यापक सौन्दर्य को हम आत्मा के द्वारा ग्रहण कर सकते हैं। नेत्रों का सम्बन्ध सर्वप्रथम रूप से होने के पश्चात् ही शनैःशनैः आत्मा का सम्बन्ध स्थापित होता है। भिन्न-भिन्न कलाकार रूप का साक्षात्कार अपनी-अपनी ज्ञान इन्द्रियों की शक्ति के आधार पर भिन्न-भिन्न प्रकार से करते हैं। इसीलिये एक ही वस्तु से कई कलाकारों के द्वारा बनाये हुए चित्र भिन्न आकार, प्रकार तथा अनुपात के होंगे।

किसी भी कृति की परख चाहे आँख से करें या मस्तिष्क द्वारा करें, दोनों दशाओं में रुचि का होना आवश्यक है। जब हम किसी वस्तु या आकृति को देखते हैं तो उसके रंग, अनुपात, आकार तथा प्रकार में हमारी रुचि विलीन हो जाती है तभी हम उस वस्तु का वास्तविक आनंद ग्रहण करते हैं। इस रुचि के आधार पर ही हम रूप को शुभ या अशुभ रूप में ग्रहण करते हैं। किसी भी कलाकृति में रूपरेखा जितनी सरल तथा स्वाभाविक होगी चित्र उतना ही उत्तम होगा। किसी भी कृति में यह गुण समाविष्ट होने पर भिन्न-भिन्न रुचि के मनुष्य आनंद ग्रहण कर सकते हैं।

२. **प्रमाण**—प्रमाण का अर्थ आकृतियों के अनुपात का ठीक ज्ञान करना है। प्रमाण के अन्तर्गत आकृतियों के माप, लम्बाई-चौड़ाई, सीमा, रचना, कद, कौड़ा आदि आकृति का विवरण आ जाता है। प्रमाण के द्वारा मूल वस्तु का ज्ञान चित्र में भरा जा सकता है। अनुपात के लिये उचित ज्ञान को 'प्रमा' के नाम से सम्बोधित किया गया है। किसी विशाल पर्वतमाला या सागर-तट को किसी दीवार के धरातल पर अंकित करने से पहले पर्वत, आकाश, वृक्ष या सागर, नौका तट आदि के लिये अनुपातानुसार छोटा करके यथा स्थान

अनुपात में रखना होगा। यही हमारी प्रमा शक्ति का कार्य माना गया है। प्रमा इस अनंत सृष्टि या सीमित जगत को मापने, देखने, समझने के लिये हमारे अन्तःकरण का मापदण्ड है। प्रमा से न केवल निकट या दूरी का ज्ञान होता है बल्कि किसी वस्तु का कितना भाग चित्र में प्रस्तुत करें जिससे चित्र आकर्षक लगे इसका भी प्रमा ही निर्धारण करती है। प्रमा के द्वारा ही हम पुरुष तथा स्त्री अनुपात की विभिन्नता, पशु-पक्षी आदि की भिन्नता तथा भेदों को ग्रहण करते हैं। पुरुष तथा स्त्री की लम्बाई-चौड़ाई में भेद, उनके अंगों की रचना किस क्रम में होनी चाहिए अथवा देवताओं, राजाओं और साधारण मनुष्य के चित्रों के कद का क्या अनुपात है ये तत्व प्रमा के द्वारा ही निश्चित किये जाते हैं। चित्राचार्यों ने प्रमाण के आधार पर पाँच प्रकार के रूपों का वर्णन दिया है जो इस प्रकार है—

(१) मानव—दस ताल (जैसे पांडव, राम, कृष्ण, शिव आदि), (२) भयानक—बारह ताल (जैसे भैरव, बाराह, हयग्रीव), (३) राक्षस—सोलह ताल (जैसे कंस, रावण), (४) कुमार-आठ ताल (जैसे वामन), (५) बाल—पाँच ताल (जैसे बाल गोपाल)। इस नाप-तोल में ताल को एक इकाई माना गया है। इसी आधार पर विभिन्न आकृतियों के अनेक प्रमाण बताये गए हैं।

(२) **भाव**—भाव का प्रदर्शन आकृति की भंगिमा से होता है। भारतीय काव्यशास्त्र में भाव के लिए काव्य रचना का मूल आधार माना गया है और भावों की महत्ता पर सूक्ष्मता से विचार किया गया है। भाव के उदय से ही शरीर तथा इन्द्रियों में विकार की स्थिति उत्पन्न होती है।" भाव दो प्रकार से प्रकट होता है— (१) प्रकट तथा (२) प्रच्छन्न

भाव के प्रकट रूप का दर्शन हम नेत्रों के द्वारा कर सकते हैं परन्तु प्रच्छन्न रूप का अनुभव केवल मन के द्वारा कर सकते हैं। वर्षाकाल के काले बादलों तथा हरियाली का सौन्दर्य, माथे पर हाथों को रखकर बैठने में, आँखों को दबाकर रोने में, अस्त-व्यस्त केशों के लहराने में, अधरों और नयनों की फड़कन में, झुकी-झुकी पलकों में, जो भाव प्रकट होते हैं उन्हें हम प्रकट रूप में आँखों से देख सकते हैं। किन्तु भाव के प्रच्छन्न रूप का आँखों को आभास नहीं होता, इसका ज्ञान अनुभव के द्वारा होता है। चित्र की ये अचित्रित बातें, जो नेत्रों के द्वारा नहीं देखी जातीं व्यंजना के द्वारा पहचानी जा सकती हैं। बाहर के रूप को रेखा, रंगों तथा आकारों के द्वारा प्रकट रूप में अंकित किया जा सकता है परन्तु भाव के व्यंग्य पक्ष को या उसके आन्तरिक रूप को कलाकार रूप की ओट में अभिव्यक्त करता है। आकृति के शरीर की विभिन्न स्थितियों में परिवर्तन के द्वारा कलाकार अपने हृदय के भावों को प्रदर्शित करता आया है। परन्तु मन के अव्यक्त भावों को दिखाना बहुत कठिन होता है। उदाहरण में मान लीजिये कि हमें किसी भिखारी के कटोरे को दिखाना है तो केवल उसको पुराना दिखाकर ही आशय पूर्ण नहीं होता इसलिये हमें एक भिखारी जैसे दुर्बल, फटेहाल, हाथ फैलाये भिखारी को भी उसके साथ बनाना होगा, अन्यथा वह कटोरा गरीब, धनवान, संत या कबाड़ी का भी माना जा सकता है। भाव की ऐसी समस्या का समाधान व्यञ्जना शक्ति (Suggestion) से किया

जाता है। ऐसी दशा में कलाकार चित्र की पृष्ठभूमि में ऐसे प्रतीकों या सहायक रूपों को संयोजित कर देता है जिससे अभीष्ट भाव का उदय हो।

(३) **लावण्ययोजना**—रूप, प्रमाण तथा भाव के साथ चित्र में लावण्य का होना परम आवश्यक है। प्रमाण जिस प्रकार रूप को ठीक दिशा देता है उसी प्रकार लावण्य को उत्कर्ष प्रदान करता है। भाव आन्तरिक सौन्दर्य का बोधक है और लावण्य वाह्य सौन्दर्य का प्रतीक है। भाव द्वारा कभी-कभी चित्र में कर्कशता का आभास होने लगता है किन्तु लावण्ययोजना से वह आकर्षक बन जाता है। चित्र में रूप और प्रमाण की यथोचित उपयुक्त व्यवस्था होने पर भी लावण्य का समावेश किये बिना चित्र से सौन्दर्य की अभिव्यञ्जना नहीं होती। दूसरी ओर लावण्य का उदय मुख्यतया रूप, प्रमाण तथा भाव से ही होता है। जिस प्रकार एक कान्ति (लावण्य) रहित मोती की भंगिमा निष्प्रभ है उसी प्रकार रूप, प्रमाण तथा भाव से युक्त चित्र भी 'लावण्य' के बिना आकर्षण रहित है। लावण्य का ठीक संतुलन भी आवश्यक है।

(४) **सादृश्य**—मूल पदार्थ या भाव को उसकी प्रतिकृति में मूल जैसी समानता के साथ दर्शित करना 'सादृश्य' है। चित्र सत्य पर आधारित हो या कल्पना पर इसमें चित्रित व्यक्ति या आकृति को दर्शक तुरन्त पहचान जाये तो सादृश्य ठीक है। जिस वस्तु को हम चित्र में अंकित करते हैं, उसके गुण अथवा दोष चित्र में समाविष्ट होना चाहिए। उदाहरणार्थ बुद्ध के चित्र में उनकी दया तथा अहिंसा की वे विशेषताएँ होनी चाहिए जो उनमें सारे संसार ने देखीं। यदि वे विशेषताएँ चित्र में नहीं हैं तो चित्र को महावीर स्वामी का भी समझा जा सकता है, क्योंकि दोनों ने ही तपस्या की और दोनों का योगी रूप है। परन्तु इसके लिए बुद्ध को कटे केश, अहिंसा का संदेश देती मुद्रा में तथा हाथ में भिक्षापात्र लिये अंकित करना होगा। महावीर के चित्र में ये विशेषताएं उपयुक्त नहीं हैं। अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने किसी रूप के भाव को किसी दूसरे रूप में प्रकट कर देने को सादृश्यता उत्पन्न करना माना है।[१] यदि एक वस्तु से दूसरी वस्तु का भाव उत्पन्न होता है-या भिन्नता होते हुए भी यदि दोनों वस्तुओं में समानता है तो उनका अपना-अपना स्वभाव है। लहरदार आकृति की समानता होने के कारण वेणी से सर्प को सादृश्य किया गया है परन्तु यह दोनों भिन्न हैं क्योंकि सर्प का धर्म है जमीन पर सरकना और वेणी का धर्म है सिर से लटकना। यदि जमीन पर वेणी पड़ी हो तो उसका धर्म सर्प का भय दिखाना नहीं है। सादृश्य ऐसा सच्चा तभी होगा जब जहाँगीर के चित्र को दर्शक जहाँगीर का ही कहें, औरंगज़ेब का नहीं। इस प्रकार चित्र को पहचानने में जब दर्शक भूल नहीं करता तो चित्र की शुद्धता सराहनीय है, जो सादृश्य के द्वारा ही प्राप्त है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के अन्तर्गत चित्रसूत्र नामक अध्याय में सादृश्य को प्रमुख वस्तु माना गया है।—"चित्रे सादृश्यकरणम् प्रधानं परिकीर्तितम्।" (चित्रसूत्र)

(५) **वर्णिका भंग**—वर्णिका का अर्थ है कलात्मक ढंग से नाना रंगों तथा तूलिका का प्रयोग। किस प्रकार के चित्र के लिए किस प्रकार के वर्णों का प्रयोग करना चाहिए तथा किस

रंग के साथ कौन सा रंग आना चाहिए ये सभी समस्याएं वर्णिकाभंग के अन्तर्गत आती हैं। रंग की भिन्नता से वस्तुओं का अस्तित्व ही प्रदर्शित नहीं होता बल्कि उनका अंतर भी अभिव्यक्त होता है। बिना वर्ण साधना के उपरोक्त प्रथम पांच अंगों का कोई दृष्टव्य अस्तित्व नहीं रहता बल्कि उनका स्थान केवल मन तक सीमित रह जाता है। इस प्रकार उपरोक्त पांच कला अंगों को वर्ण विधि तथा तूलिका ही साकार रूप प्रदान करती है। यद्यपि वर्ण पांच माने गये हैं परन्तु इनके सम्मिश्रण से सैकड़ों सम्मिश्रित वर्ण उत्पन्न होते हैं। पशु, पक्षी, मानवाकृति आदि में किस प्रकार के रंगों का प्रयोग किया जाए चित्रकार के लिए यह जानना परमावश्यक है।

वर्ण ज्ञानं नास्ति किं तस्य जपपूजनैः।

वर्णिका भंग की पूर्णता प्राप्त करने के लिए लघुता, क्षिप्रता और हस्तलाघव और वर्ण के कौशल की आवश्यकता है।* यदि किसी पुष्प का चित्र बनाना है तो उससे फूलों का रंग ही नहीं सुगंध की भावना का उदय भी होना चाहिए। वात्स्यायन ने यह भी उल्लेख किया है कि नागर के आवास कक्ष में पलंग (सेज) के सिरहाने खूंटी पर वीणा तथा चित्र-रचना का सामान टंगा होना चाहिए। प्रेमिका को वश में करने का एक उपाय बताते हुए यह भी कहा गया है कि जहाँ उसका घूमना-फिरना हो वहाँ उसके चित्रों के साथ नायक का चित्र बनाकर रख देना चाहिए।

चित्रकर्म के जिन छः अंगों का ऊपर विवेचन किया गया, वस्तुतः वे 'भारतीय शिल्प' के छः अंग हैं। शिल्प शब्द का अर्थ व्यापक है और चित्रकला भी एक शिल्प है। बाद में 'शिल्प' शब्द का अर्थ 'कला' से लिया जाने लगा। अन्ततः शिल्प, स्थापत्य और चित्र, ये कला के तीन भेद माने जाने लगे।

लोकप्रिय नहीं हो सकता था। कला की सांकेतिक एवं रूपप्रधान भाषा विभिन्न जातिय के लोगों से भावों के आदान-प्रदान का एक स्वाभाविक साधन थी। इस समय औ दूसरे प्रचार साधन सम्भव भी नहीं थे।

चीन देश में बौद्ध धर्म के प्रति अत्यधिक श्रद्धा, आस्था, आदर तथा सम्मान क भावना उत्पन्न हुई और ६७ ईसवी के पश्चात् एक भारतीय भिक्षु कश्यप भादुंग चीन के सम्राट मिंगटी की प्रार्थना पर सुदूर पूर्व तक गया। उसके साथ में बहुत स कलाकृतियाँ थीं जिनमें चित्र भी थे। इस समय से सातवीं शताब्दी तक कलाकार पुजारियों के निरंतर ही अनेक दल एक स्रोत के समान भारत से चीन की ओर पहुँचे जिनसे सम्पूर्ण मध्य-एशिया में बौद्ध धर्म तथा कला का विस्तार हुआ। ऐसे उल्लेख भी उपलब्ध हैं कि इनमें से कुछ भिक्षु चीन में रहने लगे और उन्होंने वहाँ पर भित्तिचित्रों का निर्माण किया। सुदूर पूर्व के देश जापान पर भी इस आंदोलन का गहरा प्रभाव पड़ा। जापान के 'नारा' सम्राटों के समय में सातवीं शताब्दी में बौद्ध-भावना का जापान की कला में भव्य रूप उमड़ पड़ा, जापान के इन चित्रों की विशेषताओं को देखकर यह संदिग्ध सा लगता है कि यह कलाकृतियाँ यहाँ के स्थानीय कलाकारों की बनाई हुई हैं। यह कृतियाँ चीनी कलाकारों की बनायी हुई प्रतीत होती हैं। इस प्रकार की विशेषताएँ अपने उत्कृष्ट रूप में अजन्ता, बादामी तथा बाघ के भित्तिचित्रों में विद्यमान हैं। होरियोंजी मंदिर के भित्तिचित्र आठवीं ईसवी शताब्दी के हैं। वेनियन के अनुसार इन चित्रों की शैली तथा शिल्प में भारतीय चित्रकला की विशेषताएँ हैं। भाव-चित्रण की विशेषता तथा प्रवाहपूर्ण सीमा रेखाओं की सशक्त योजना को देखकर अजंता के भव्य चित्रों की याद आ जाती है। यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि ये चित्र अजंता की परम्परा पर ही बनाये गए हैं क्योंकि उस समय जापान और भारत में स्वतंत्र रूप से सांस्कृतिक आदान-प्रदान होता था। पन्द्रहवीं शताब्दी ईसा पश्चात् के जापान के तोसा स्कूल के चित्रों में इस प्रकार का क्षीण प्रभाव परिलक्षित होता है। इन देशों की कला में भारत की चित्रकला के षडंगों का प्रचलन भी कुछ परिवर्तित अवस्था में प्राप्त होता है।

दूसरी ओर ऐसे उदाहरण प्राप्त हैं जिनसे ज्ञात होता है कि भारतवर्ष का आध्यात्मिक और कलात्मक वातावरण दूसरे देशों के स्नातकों को आकर्षित कर रहा था। ये लोग यहाँ पर भारतीय तथा बौद्ध साहित्य तथा कला को ग्रहण करने के लिये भारत में आते थे। पाँचवीं शताब्दी में फाहियान और सातवीं में ह्वेनसांग भारत में पर्यटन करने और बौद्ध धर्म का ज्ञान प्राप्त करने आये। इनके अतिरिक्त और भी बहुत से चीनी यात्री भारत आये जिनमें से कुछ कलाकार थे जो भारतवर्ष के चित्रकारों से चित्रकला की दीक्षा ग्रहण करके पुनः स्वदेश (चीन) लौटे। भारत का दूसरे देशों से सम्बन्ध इस बात का द्योतक है कि भारत की चित्रकला, जिसका विकास प्रथम शताब्दी ईसवी में हुआ था, का प्रभाव सुदूर पूर्वी तथा उत्तरी देशों पर पड़ रहा था।

समय के क्रूर प्रहारों से अगणित कलाकृतियों की क्षति या हानि हुई, फिर भी भारत में इस समय की भित्तिचित्रकारी के उदाहरण प्राप्त हुए हैं। इन चित्रों में बौद्धकाल की समस्त विशेषताएँ हैं और इस काल को कला का एक रीतिवादी संस्थान माना जा सकता है।

जिस प्रकार भारत बौद्ध धर्म के प्रवर्तक बुद्ध की जन्मभूमि है उसी प्रकार यह भी निश्चित है कि भारत बौद्ध धर्म से सम्बन्धित चित्रकला का भी उद्‌गम स्थल है। बौद्ध मत के अनुयाइयों तथा चैत्यों के प्रबंधकों ने श्रेष्ठ कलाकारों को संरक्षण प्रदान किया। अजन्ता की भव्य चित्रकारी में इस कला शैली की उन्नति तथा विकास की क्रमिक प्रगति स्पष्ट दिखाई पड़ती है। इन चित्रावलियों में इस काल की आरम्भिक और अंतिम दोनों चरणों की कला दिखाई पड़ती है। श्रीलंका में सिघिरिया की गुफाओं में भी इस कलाशैली का परिपक्व रूप दिखाई पड़ता है। भारत में बाघ, बादामी तथा सित्तनवासल के चित्रों में भी अजन्ता के ही रेखा चातुर्य का प्रभाव है, यद्यपि इन गुफाओं के चित्रों की तकनीकी आदि कुछ बातों में अजन्ता से अधिक समानता नहीं दिखाई पड़ती है। कदाचित स्थानान्तर, भिन्न प्रकार का संरक्षण, जलवायु तथा वातावरण की भिन्नता के कारण प्रविधि की यह असमानता दिखाई पड़ती है। विशेष रूप से अजन्ता की बौद्धकला की सर्वोत्तम चित्रकृतियों की भाव तथा रूप की सुंदरता और विशेषताओं को देखकर दर्शक चकित रह जाते हैं।

अजन्ता की गुफाएँ

सुंदर रूप और कल्पना की मृदु मुस्कान, करुणा और शान्ति के आँचल से आवृत अजन्ता की कलाकृतियाँ अपने अवगुन्ठन में न जाने कितनी सरस भावनाओं और कलाकारों की अन्तर-अनुभूतियों की उपलब्धियाँ छिपाये अपने अस्तित्व से प्राचीन भारतीय कला-इतिहास को स्वर्ण पृष्ठिका लगाये हुए अपने मूक रूपों से चिरशान्ति और आत्मा के अमरत्व का संदेश दे रही है। अजन्ता महाराष्ट्र (बम्बई राज्य) में औरंगाबाद जिले में स्थित है। अजन्ता तक पहुँचने के लिये जलगाँव से फरदापुर ग्राम होते हुए जाना पड़ता है। यहीं पर अजन्ता से दो मील की दूरी पर 'अजिण्ठा' नाम का ग्राम है जिसका मूल उच्चारण 'अजिस्ठा' है। इस ग्राम के नाम पर ही गुफाओं का नाम अजन्ता पड़ा है।

ये गुफाएँ सेंट्रल रेलवे के स्टेशन औरंगाबाद से लगभग १०२ कि०मी० पर स्थित हैं। औरंगाबाद से मोटर-बसों के द्वारा अजन्ता तक आने-जाने की अच्छी व्यवस्था है। सेंट्रल रेलवे के पहूर और जलगाँव स्टेशनों से भी बस द्वारा अजन्ता तक पहुँचा जा सकता है। जलगाँव तथा अजिण्ठा दोनों ही स्थानों पर दर्शनार्थियों के ठहरने के लिए विश्रामगृह बने हुए हैं। अब मोटर बस के द्वारा आने जाने की पर्याप्त अच्छी व्यवस्था है। जलगाँव से अजन्ता तक जाने वाले मार्ग पर ही पहूर तथा फरदापुर गाँव भी स्थित हैं।

अजन्ता की गुफाएँ हरिशृंगार वृक्षों से आच्छादित मनोरम एकाकी घाटी में स्थित है। यहाँ पर पक्षियों के वृन्द प्रातः तथा सन्ध्या के समय अपने सुरीले, मधुर कलरव से एक संगीत की लय छेड़ देते हैं। इस घाटी में सतपुड़ा की पहाड़ियों को काटती बघोरा नदी अनेक घुमाव लेती हुई कल-कल निनाद से प्रवाहित होती है। इस नदी के घुमावों से घाटी का रूप अर्द्धचन्द्राकार के समान बन गया है और इसके बायीं ओर या उत्तर की ओर एक मोड़ पर लगभग २५० फुट ऊँची एक पहाड़ी सीधी खड़ी है। इस पहाड़ी में एक अर्द्धचन्द्राकार पंक्ति में ये गुफाएँ काटकर बनायी गई हैं। इस पहाड़ी के उत्तर की ओर से एक प्रपात निनाद करता प्रवाहित होता है। ये तीस गुफाएँ पूर्व से पश्चिम की ओर लगभग ६०० गज की लम्बाई में बनायी गई हैं। वर्षा आगमन के साथ यह सारी घाटी शश्यश्यामल वृक्षों से आच्छादित हो जाती है। पुष्पित हरिशृंगार तथा पुष्पों की सुगंध से यह घाटी महक जाती है, तब शाल और सागौन के वृक्ष प्रहरी के समान किसी के आगमन की मौन प्रतीक्षा में खड़े रहते हैं।

इस शान्ति और निरंजनता के वातावरण को देखकर ही बौद्ध भिक्षुओं ने अपनी कला साधना के लिये यह स्थान उपयुक्त समझा होगा। वैसे तो अजन्ता के गुफा-मंदिर और उनके मूर्तियों से सुसज्जित प्रवेशद्वार ही पर्याप्त आश्चर्यजनक हैं, परन्तु इन गुफाओं के आकर्षण का मुख्य कारण इनकी भीतरी दीवारों पर की गई भित्तिचित्रकारी है, जो पर्याप्त नष्ट हो जाने पर भी चमकदार दिखाई पड़ती है। अजन्ता की प्रत्येक गुफा में मूर्तियाँ, स्तम्भ तथा द्वार काटकर भित्तियों पर चित्रकारी की गई है। इस प्रकार अजन्ता की गुफायें वास्तुकला, मूर्तिकला तथा चित्रकला का उत्तम संगम हैं।

अजन्ता की खोज, प्रतिकृतियाँ तथा प्रचार

मुगलकाल के कुछ ऐसे लेख प्राप्त होते हैं जिनसे पता चलता है कि मुगल सेनाएँ दक्षिण की ओर अजन्ता की घाटी से होकर जाती थीं। लेकिन सैकड़ों वर्षों तक जंगलों में छुपी ये अज्ञात गुफाएँ जंगली पशुओं, चमगादड़ों आदि पक्षियों का घर बनी रहीं और १८१६ ईसवी में यूरोप के लोगों को सर्वप्रथम इन गुफाओं का ज्ञान हुआ। उनको यह ज्ञान मद्रास रेजीमेंट के कुछ सैनिकों से हुआ जो इस घाटी में विद्रोहियों को दबाने के लिए गये थे। एक सैनिक लोमड़ी का पीछा करते हुए अजन्ता की एक गुफा में पहुँचा और उसने चित्र देखे। इन चित्रों की सूचना उसने अपने कमान्डेंट को दी। यह सूचना पाकर एक अंग्रेज कम्पनी अधिकारी विलियम एर्स्किन ने एक लेख तैयार किया और उसे 'बॉम्बे लिटरेरी सोसाइटी' में पढ़ा। इसके पश्चात् १८२४ ई० में लेफ्टीनेंट जेम्स ई० अलेक्जेंडर ने इन गुफाओं को देखा और उन्होंने रायल सोसाइटी लंदन को इनका विवरण भेजा। परन्तु फिर भी १८४३ ईसवी तक इन गुफाओं की ओर किसी का ध्यान नहीं गया। १८४३ ई० में चार वर्ष अजन्ता का निरीक्षण तथा अध्ययन करके मिस्टर

जेम्स फरगूसन ने इन गुफाओं का विवरण फिर से कम्पनी को दिया और ईस्ट-इंडिया कम्पनी के निदेशकों से उन्होंने जनता के व्यय पर इन चित्रों की अनुकृतियाँ तैयार कराने का आग्रह किया। तब ईस्ट इंडिया के निवेदन पर इंग्लैंड की सरकार ने एक कुशल चित्रकार मेजर राबर्ट गिल को १८४७ ई० में अजन्ता के चित्रों की अनुकृतियाँ बनाने के लिये भारत भेजा। १८५७ ईसवी के विद्रोह की चिंगारी के भड़कते ही मेजर गिल ने चित्रों की अनुकृतियाँ बनाने का काम छोड़ दिया। इस समय तक ३० या अधिक चित्रों की अनुकृतियाँ बनकर तैयार हो चुकी थीं, यह अनुकृति-चित्र मेजर गिल ने स्वदेश (इंग्लैंड) भेज दिये जो १८६६ ईसवी की क्रायस्टल पैलेस की प्रदर्शनी में प्रदर्शित किये गए। परन्तु इस भवन (पैलेस) में आग लग जाने के कारण यह अनुकृतियाँ जलकर समाप्त हो गईं। इस प्रकार केवल पांच अनुकृति-चित्र जो मेजर गिल ने बाद में बनाये थे, शेष रह गए। मेजर गिल के द्वारा बनाये गए अजंता के सारे अनुकृति-चित्र अप्राप्य हैं। इन चित्रों के कुछ छोटे-छोटे इनग्रेविंग्ज प्रिन्ट 'मिसेज इस्पियर' की 'एंशियेंट इंडिया' नामक पुस्तक में प्रकाशित हैं।' तत्पश्चात् १८७२ ईसवी से १८८५ ईसवी के मध्य बम्बई आर्ट स्कूल के प्रिंसिपल मिस्टर ग्रिफिथ्स तथा उनके शिष्यों ने सुंदर प्रतिकृतियाँ बनायीं जो १८८५ ई० में 'विक्टोरिया एण्ड अल्बर्ट म्यूजियम'—साउथ केंसिंग्टन में प्रदर्शित की गईं, परन्तु उस भवन में अग्नि लग जाने से जलकर नष्ट हो गईं। ग्रिफिथ्स फिर भारत आये और उन्होंने फिर चित्रों की अनुकृतियाँ बनायीं जो दो जिल्दों में 'दि पेंटिंग्स ऑफ बुद्धिस्ट केव टेम्पिल्स ऑफ अजन्ता, खान देश, इंडिया' शीर्षक से १८९६ में प्रकाशित हो चुकी है। 'इंडिया आफिस लंदन' में फोटोग्राफों का एक सुंदर संग्रह भी है जो डॉ० बर्गेस ने तैयार किया था।

इस प्रकार क्रायस्टल पैलेस के अग्निकाण्ड ने ही इन चित्रों की प्रतिलिपियों को नष्ट नहीं किया, बल्कि साउथ केंसिंग्टन म्युजियम के अग्निकांड में ग्रिफिथ्स के द्वारा बनायी गई कई प्रतिकृतियाँ जलकर स्वाहा हो गईं। इस अग्निकांड से बची लगभग एक सौ से अधिक प्रतिकृतियाँ 'इंडियन सेक्शन ऑफ विक्टोरिया एण्ड अल्बर्ट म्यूज़ियम'—साउथ केंसिंग्टन, में सुरक्षित हैं, परन्तु इनमें से कई चित्र नष्ट हो चुके हैं।

१९०९-१९११ ई० में लेडी हेरिंघम भारत आयीं और उन्होंने स्व० नन्दलाल बसु, स्व० असित कुमार हाल्दर, वेंकटप्पा एवं एस० एन० गुप्ता तथा कु० लार्चर तथा ल्यूक भारतीय कलाकारों के द्वारा पुनः अजंता के चित्रों की अनुकृतियाँ तैयार करायीं जो १९१५ ई० में लंदन से प्रकाशित हुईं। उन्होंने हैदराबाद राज्य के निज़ाम से भी सहायता माँगी जिसके परिणामस्वरूप सैयद अहमद वहाँ के अध्यक्ष नियुक्त किये गए। सैयद अहमद ने फिर से चित्रों की प्रतिकृतियाँ तैयार कराईं। इन चित्रों की रंगीन फोटो प्रतिकृतियों का एक संग्रह जी० यज़दानी ने तैयार किया जिसको निज़ाम सरकार के पुरातत्व विभाग ने चार जिल्दों में प्रकाशित किया। स्वतंत्रता के पश्चात् ललित कला अकादमी (दिल्ली) ने यहाँ के चित्रों

के रंगीन फोटोग्राफों के प्रिन्ट्स का एक छोटा पोर्टफोलियो तैयार कराया जो कला प्रेमियों तक अजंता के चित्रों की छवि पहुँचाने में सहायक सिद्ध हुआ।

१९५४ ई० में यूनेस्को के द्वारा भी न्यूयार्क से अजन्ता के रंगीन चित्रों का एक संग्रह 'पेंटिंग्स ऑफ अजन्ता केव्ज' के नाम से प्रकाशित हुआ।

अजन्ता के चित्रों की सुरक्षा

अजन्ता के चित्रों की प्रख्याति ही अजन्ता के चित्रों के लिये घातक सिद्ध हुई। कुछ समय तक हैदराबाद राज्य के निज़ाम ने अजन्ता की सुरक्षा में रुचि नहीं दिखायी। वास्तव में निज़ाम के निम्न अधिकारियों ने अजन्ता के चित्रों के लिए बहुत क्षति पहुँचायी। निज़ाम द्वारा नियुक्त अजन्ता का संरक्षण पदाधिकारी अजन्ता के प्रख्यात भित्ति-चित्रों में से उत्तम आकृतियों के सिर के भाग का पलास्तर-खण्ड दीवार से काट-काटकर दर्शकों को धन के लोभ में भेंट कर देता था। यह बात और भी लज्जाजनक है कि डॉ० बर्ड, जो बम्बई के पुरातत्त्ववेत्ता थे, ने भी यह अपराध इस लोभ से किया कि वह बम्बई संग्रहालय को इस प्रकार लाभान्वित कर सकें। इसके अतिरिक्त दूसरी क्षति धुएँ से हुई तथा पक्षियों के लगातार इन गुफाओं में घोंसले बनाकर रहने के कारण हुई। साधु तथा व्यापारीदल यात्रा करते समय मार्ग में इन गुफाओं में विश्राम करते थे और उन्होंने खाना बनाने के लिये आग जलाकर धुआँ आदि करके इन गुफाओं को बहुत अधिक धुंधला और काला कर दिया है। १९०३ ई० तथा १९०४ ई० में विशेष गुफाओं में चित्रों के सामने जाली लगवा दी गई, जिससे दर्शक चित्रों पर अपना नाम लिखकर नष्ट न कर सकें और यहाँ पर यथोचित सफाई भी करा दी गई।

पुरातत्त्व विभाग ने अजन्ता के चित्रों के संरक्षण हेतु एक विस्तृत योजना प्रस्तुत की और इटली से भित्ति-चित्रों के विशेषज्ञों को चित्रों की सफाई तथा संरक्षण हेतु बुलाया गया। इन विशेषज्ञों ने १९२०-१९२२ ई० तक इन चित्रों को रासायनिक उपचार से साफ किया ओर जहाँ-जहाँ पर पलास्तर में दर्ज पड़ गई थी उनमें पलास्तर ऑफ पेरिस आदि भर दिया, जिससे पलास्तर-खण्ड दीवार से न गिर जायें। १९०८ ई० में अजन्ता में एक क्युरेट की नियुक्ति हो गई थी। इन चित्रों की ठीक प्रतिलिपियाँ बनायी जा चुकी हैं तथा फोटोग्राफ तैयार किये जा चुके हैं। अजन्ता के चित्र अब बहुत खण्डित हो चुके हैं फिर भी भारतवर्ष की छः सौ वर्ष की कला साधना के अवशेष अजन्ता में अभी चित्रों के रूप में सुरक्षित हैं। १९५३ ई० से भारत सरकार के पुरातत्त्व विभाग ने इन गुफा-चित्रों के संरक्षण का कार्यभार अपने हाथों में संभाल लिया है।

गुफाओं का गणना-क्रम तथा सुरक्षित चित्र

इन गुफाओं की गणना पूर्व से पश्चिम की ओर की गई है और सभी विद्वान इस गणना-क्रम से सहमत हैं। इन गुफाओं में नवीं, दसवीं, उन्नीसवीं, छब्बीसवीं तथा तीसवीं

गुफाएँ पूजा के स्थान अर्थात् चैत्य-गुफाएँ हैं। इनमें से कुछ गुफाएँ कभी पूर्ण नहीं हो सकीं। इन गुफाओं में वास्तुकला का इतना विकसित रूप दिखाई पड़ता है कि इनको गुफा कहकर पुकारना उपयुक्त नहीं, अत इनको गुफामंदिर मानना उचित होगा।

१८७९ ई० में जिन सोलह गुफाओं में चित्र शेष रह गये थे उनमें पहली, दूसरी, चौथी, सातवीं, नवीं, दसवीं, ग्यारहवीं, पन्द्रहवीं, सोलहवीं, सत्रहवीं, अट्ठारहवीं, उन्नीसवीं, बीसवीं, इक्कीसवीं, बाईसवीं तथा छब्बीसवीं गुफाएँ ही न्यूनाधिक चित्र अवशेषों से अलंकृत थीं। १९१० ई० में विशेष महत्त्वपूर्ण चित्रों के अवशेष पहली, दूसरी, नवीं, दसवीं, ग्यारहवीं, सोलहवीं, सत्रहवीं, उन्नीसवीं तथा इक्कीसवीं गुफाओं में शेष रह गये थे। इन नौ गुफाओं में से सत्रहवीं गुफा में ही सबसे अधिक सुरक्षित चित्र प्राप्त हैं।

गुफाओं का निर्माणकाल

अनुमानतः तेरहवीं गुफा का निर्माणकाल २०० ई० पू० है जो सबसे प्राचीन है। इसकी दीवार पर चमकदार मौर्यकालीन पालिश है। प्राचीन गुफाओं में आठवीं, बारहवीं तथा तेरहवीं गुफाओं ~~में चित्र नहीं हैं~~, आठवीं, नवीं तथा ग्यारहवीं गुफाएँ सम्भवतः २०० ई० पू० से परवर्ती हैं क्योंकि इनमें कुछ मूर्तियाँ भी हैं। आठवीं से तेरहवीं गुफा तक की छः गुफाएँ प्रारम्भिक हीनयान बौद्ध धर्म से सम्बन्धित हैं और अनुमानतः २०० ई० पूर्व तथा १५० ई० से कुछ बाद तक लगभग ३५० वर्षों के काल में अनुमानतः निर्मित की गई हैं। शेष सारी गुफाएँ महायान बौद्ध धर्म से सम्बन्धित हैं। छठी तथा सातवीं गुफाओं का निर्माण ४५० ई० से ५०० ईसवी के मध्य किया गया है। शेष गुफाएँ अर्थात् पन्द्रहवीं से बाईसवीं, इक्कीसवीं तथा उन्नीसवीं और पहली से पांचवीं तक की गुफाएँ ५०० ई० तक बनायी गई हैं।[3] कई गुफाओं को अधूरा छोड़ दिया गया है। पहली गुफा फर्गुसन के अनुसार सबसे बाद में चित्रित की गई।

भित्तिचित्रों का कालक्रम

इन गुफाओं में बने चित्र उसी समय के नहीं हैं जिस समय इन गुफाओं का निर्माण हुआ। सबसे प्राचीन चित्र निश्चित रूप से नवीं तथा दसवीं गुफा में हैं। इन गुफाओं के चित्रों में से कुछ पुनः बाद में ऊपर बनाये गए चित्रों से ढक दिये गए हैं। इन आरंभिक चित्रों की शैली में साँची की प्रस्तर शिल्प-शैली से इतनी समानता है कि उनको निश्चित रूप से इसी समय का माना जा सकता है। ये गुफाएँ दक्षिण के आंध्र राजाओं के संरक्षण में चित्रित की गईं। यद्यपि यह राजा बौद्ध-धर्म के अनुयाई नहीं थे परन्तु वे बौद्ध-धर्म के प्रचार में कोई अवरोध उत्पन्न नहीं करते थे। इसके पश्चात् ऐसा प्रतीत होता है कि कई सौ वर्षों तक अजन्ता में चित्र नहीं बनाये गए।

अजन्ता में अधिकांश चित्र निःसन्देह चालुक्य राजाओं (५५०-६४२ ईसवी) तथा
के वाकाटक राजाओं के समय में बनाये गए। सोलहवीं गुफा में एक वाकाटक लेख
है। इसके पश्चात् पल्लव राजाओं के शासन काल में चित्रकारी का कार्य रुक गया, क्यों
थे राजा शैव थे। मालवा राज्य की बाघ गुफाओं के चित्र पाँचवीं शताब्दी में बनाये
चुके थे। अजन्ता की कुछ परवर्तीकाल की मूर्तियों और एलोरा की आरंभिक मूर्तियों
बहुत समानता है। चित्रित गुफाओं में से निम्न गुफाओं की चित्रकारी महत्त्वपूर्ण है।
गुफाओं की चित्रकारी के कालक्रम के सम्बन्ध में सभी विद्वान प्रायः एकमत हैं।

गुफा संख्या ९ तथा १०—२०० ई० पू० से ३०० ई० तक।

गुफा संख्या ९ तथा १० के स्तम्भ—३५० ई० से ४०० ई० तक।

गुफा संख्या १६ तथा १७-३५० ई० से ५०० ई० तक। (गुफा संख्या ४, ६, ११ त
१५ भी इसी काल में चित्रित हैं)।

गुफा संख्या १ तथा २—५०० ई० से ६२८ ई० तक।

आधुनिक समय में भित्तिचित्रण और तत्सम्बन्धी रंग बनाने की विधि

ग्रिफिथ्स महोदय के अनुसार अजन्ता तथा अन्य गुफाओं में भित्तिचित्रण की परम्परा वाल
में टेम्परा तथा फ्रेस्को विधि का सम्मिश्रण है।" भारतवर्ष के चूने में सोखने की शक्ति कु
अधिक है, अतः चूने के पलास्तर को बहुत समय तक पानी में भिगोकर रखा जा सक
है, परन्तु यूरोप के चूने में इतनी अधिक सोखने की शक्ति नहीं है। यूरोप में नमी रख
के लिए भीगे कपड़े को पलास्तर पर डालने की पद्धति अपरिचित और अप्रचलित रही
इस प्रकार नमी के कारण रंग पलास्तर में बैठ जाते हैं और अधिक स्थायी हो जाते
साथ ही इन पर सीलन का प्रभाव भी कोई हानिकारक प्रभाव नहीं डाल पाता। भित्तिचित्र
की कला भारत में अजन्ता से आरम्भ हुई और आज तक मकानों, मंदिरों, भवनों आ
के अलंकरण में प्रयोग की जाती है।

आजकल भित्तिचित्र बनाने के लिए दीवार पर आधे इंच मोटे चूने के पलास्तर
तह लगा दी जाती है और एक दिन तक उसको उसी अवस्था में छोड़ दिया जाता है। य
दूसरे दिन धरातल अधिक सख्त हो जाता है तो नमी लगा दी जाती है और उसके पश्चा
एक दाँतदार थपनी या तिकोनी लकड़ी से पलस्तर के धरातल को खुरदुरा तथा ठोस बना
के लिए ठोंका या पीटा जाता है और उसके पश्चात् ऊपर से सफेद पलास्तर (भीगे हु
मुलायम चूने या कलि का लेप) की एक पतली तह कूँची से पोत दी जाती है और उसक
दूसरे दिन तक नम रखा जाता है। यदि चित्र बहुत चिकना और विवरण युक्त बनाना
तो धरातल को कन्नी से ओप कर चिकना कर लिया जाता है। इस पर ही सबसे पहल
आलेखन की रेखाएँ चरबे के द्वारा या हाथ से बना दी जाती हैं। पहले चित्र की सीमारेख
भूरे या काले रंग से बना दी जाती है और फिर सपाट स्थायी रंगों से चित्रों को भर दिय

जाता है तदोपरान्त विवरण डाल दिए जाते हैं। यह पद्धति बाघ के कुछ चित्रों में दिखाई
पड़ती है, परन्तु चूने के पलास्तर की तह पतली है।

रंगों को चावल के माँड़ या अलसी के पानी में गुड़ के साथ मिलाकर तैयार किया
जाता है। इन रंगों को केवल पानी में ही घोलते हैं। जब चित्र बनकर पूर्ण हो जाता है तो
उसको भीगे तौलिये या कपड़े से नम रखा जाता है फिर चित्र को सुखाकर लगभग एक
मास पश्चात् ओपा जाता है।

अजन्ता में भित्तिचित्रण विधि

अजन्ता के चित्रों का धरातल तैयार करने के लिये पहले पलस्तर की पर्त में चूना,
खड़िया (छत पर गोबर) बारीक बजरी का गारा या मसाला बनाकर गुफा की खुरदुरी
दीवार पर लगा दिया जाता था। इस गारे को कई दिन तक अलसी के पानी में
भिगोकर फूलने दिया जाता था। इसमें उर्द की दाल का पानी भी डाला जाता था।
कभी-कभी विशेष रूप से छत के गारे में धान की भूसी भी मिलाई जाती थी।
पलास्तर की पहली तह पौन इंच से लेकर एक इंच तक मोटी होती थी। इसके ऊपर
अंडे के छिलके की मोटाई के बराबर सफेद पलस्तर का लेप चढ़ा दिया जाता था। इस
पलस्तर का लेप स्तम्भों, पत्थर पर उरेहे हुए आलेखनों तथा मूर्तियों आदि पर भी
कर दिया जाता था। परन्तु अधिक बारीकी से कटी हुई मूर्तियों आदि में इस पलस्तर
का प्रयोग नहीं है बल्कि मिट्टी के पलस्तर का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार प्रत्येक
गुफा पलास्तर से ओपी जाती थी और चित्रित की जाती थी। यह पलास्तर ज्वालामुखी
गुफाओं की चट्टानी-दीवारों के छेदों को भली प्रकार भर देता था और उसके छेदों में
बैठ जाता था।

इटली के भित्तिचित्रों में अजन्ता की भित्तिचित्रण प्रणाली नहीं दिखाई पड़ती,
परन्तु मिश्र के भित्तिचित्रों से साम्य प्रतीत होता है क्योंकि वहाँ खड़िया के साथ भूसा
भी मिलाकर पहला पलास्तर लगाया जाता था। इस पलास्तर के ऊपर से सफेद
पलास्तर को पोत दिया जाता था। श्री हैविल का मत है कि अजन्ता में चित्र पूर्ण हो
जाने पर जब सूख जाते थे तो चित्र में अत्यधिक प्रकाश को उभारने के लिये टेम्परा
(बंधक पदार्थों के साथ मिले रंग) सफेद मिश्रित गाढ़े रंग लगाये जाते थे।[1]

लेडी हैरिंगम के मतानुसार सफेद पलास्तर पर पूर्ण विवरण सहित लाल रेखांकन
करने के पश्चात् एक ही पतले गंदे हरे रंग या टेराबट रंग (गंदा सब्ज रंग–एक
खनिज रंग) से कहीं-कहीं लाल रंग झलकता छोड़कर बल या तान (टोन) लगा दिये
जाते थे और फिर स्थानीय रंग लगाये जाते थे। बाद में काले तथा भूरे रंगों से
निश्चित सीमा-रेखाएँ बना दी जाती थीं। परन्तु बाद में आवश्यकता के अनुसार छाया
का भी प्रयोग किया जाता था। गोलाई लाने के लिये यथार्थ छाया तथा प्रकाश का

प्रयोग नहीं किया जाता था, परन्तु विरोधी, स्थानीय रंगों या काले सफेद रंगों
प्रयोग के द्वारा आकृति को निश्चित रूप प्रदान किया जाता था। परन्तु ग्रिफि
महोदय ने चित्र के रेखांकन में केवल लाल रंग के प्रयोग के द्वारा रेखांकन करने
पद्धति का ही वर्णन दिया है। चित्र में आवश्यकतानुसार छाया का प्रयोग किया जा
था, जैसे ठुड्डी के नीचे गहरे रंग का बहुधा वाश (Wash) लगाकर गोलाई
उभारा जाता था।

अजन्ता के भित्तिचित्रों के रंग

भित्तिचित्रण में गिने-चुने खनिज रंगों का ही प्रयोग किया जाता है, ताकि वे चूने
क्षारात्मक प्रभाव से अपने अस्तित्व को न खो बैठें। अजन्ता तथा बाघ में जिन रंग
का स्वतंत्रता से प्रयोग किया गया है उनमें सफेद, लाल, पीले और विभिन्न भूरे रं
हैं। इनके अतिरिक्त एक गंदे हरे (संग सब्ज़ या टेरावर्ट) और नीले (लेपिसलाजुली
रंगों का प्रयोग है। सफेद रंग प्रायः अपारदर्शी है और चूने या खड़िया से बनाया गय
है। लाल तथा भूरे रंग लोहे के खनिज रंग हैं। हरा रंग एक स्थानीय पत्थर से बनाय
गया है जो ताँबे का खनिज रंग है जिसे टेरावर्ट (संग सब्ज़) कहते हैं। अजन्ता
परवर्ती चित्रों में लेपिसलाजुली रंग (नीले रंग) का भी प्रयोग है। यह रंग ए
बहुमूल्य खनिज-पत्थर से बनाया जाता था और इस रंग को फारस तथा बदख्शा
आयात किया जाता था। शेष रंग स्थानीय हैं। प्राचीन चित्रों में जैसे जोगीमारा औ
पाँचवीं शताब्दी के सिगिरिया गुफाओं के चित्रों में नीला रंग बिल्कुल भी प्रयोग न
किया गया है। छठी शताब्दी से अजन्ता की दूसरी गुफा में लेपिसलाजुली रंग (नील
रंग) का प्रयोग दिखाई पड़ता है। अजन्ता की गुफाओं की चित्रकारी में लाल तथ
पीले रंग का अत्यधिक प्रयोग है। अनुमान है कि अजन्ता के चित्रकारों ने संखिया क
भस्म से बने पीले रंग का प्रयोग भी किया है।

अजन्ता की गुफाओं के चित्रों का विषय

आलंकारिक आलेखनों को छोड़कर अजन्ता के अधिकांश चित्रों का विषय बौद्ध-ध
से सम्बन्धित है। इन चित्रों में बुद्ध के विभिन्न चित्र और पवित्र धर्म चिन्ह सम्मिलि
हैं, साथ ही बुद्ध की जन्म-जन्मांतर की जीवन-कथाएँ तथा जातक-कथाएँ इ
गुफाओं की चित्रकारी का प्रधान विषय हैं। जातक कथाओं के अन्तर्गत बुद्ध
अनेकों पूर्व जन्मों की कथाएँ हैं, जिनका चित्रकार ने सुंदरता से अंकन किया है। य
जातक कथाओं के ही चित्र हैं, यह बात दो आधारों पर ही कही जा सकती है
प्रथम इन चित्रों पर जातक कथा का नाम लिखा है परन्तु चित्रों के नष्ट हो जा
से चित्र को पहचानने में असुविधा होती है, दूसरे दसवीं गुफा में षड्दंत हाथी

जातक कथा तथा अन्य जातक कथाओं को उनके घटनाक्रम के अनुसार अंकन एवं उनकी विशेषताओं के कारण पहचाना जा सकता है।

अजन्ता की गुफाओं की चित्रकारी

अजन्ता की गुफाओं में आरम्भिक चित्रकारी के उदाहरण नवीं गुफा तथा दसवीं गुफा में प्राप्त हैं। इन गुफाओं के चित्र बहुत अधिक क्षतिग्रस्त हो चुके हैं। यह चित्र साँची तथा भरहुत की प्रस्तर शिल्प-शैली से विशेष समानता रखते हैं। अतः इन चित्रों के समय का अनुमान सरलता से लगाया जा सकता है। परसी ब्राउन महोदय ने नवीं तथा दसवीं गुफा के चित्रों को १०० ई० पू० का माना है और इन गुफाओं के स्तम्भों पर बने चित्रों को ३५० ई० का माना है। दसवीं गुफा में एक ब्रह्मीलिपि का लेख है जिसके अनुसार विन्सेंट स्मिथ ने नवीं तथा दसवीं गुफा के चित्रों को दूसरी शताब्दी ई० पू० से १५० ई० तक का माना है।[५] इन दोनों गुफाओं के चित्रों की शैलियों में बहुत साम्य है, अतः इन दोनों के चित्रों को समकालीन माना गया है। तत्कालीन वास्तु तथा मूर्तियों से भी इन चित्रों में विशेष समानता है।

नवीं गुफा के चित्र—इस गुफा में ग्रिफिथ्स महोदय ने एक दीवार से पलस्तर का एक बड़ा खण्ड (पपड़ा) उखाड़कर उसके नीचे एक चित्र खोजा, जो चट्टान पर पोर्सलीन के समान चमकदार पलस्तर चढ़ाकर उसके ऊपर से बनाया गया था। यह नीचे वाला चित्र एक बैठी हुई स्त्री का है। इस गुफा का यह प्राचीन चित्र है, क्योंकि बाद में कई पुराने चित्रों को पतले पलस्तर की तह से ढककर ऊपर से चित्रकारी की गई है। नवीं गुफा में बने कुछ चित्र 'गुप्तकाल' के भी हैं।

इस गुफा में चित्रित स्तूप की ओर जाते पुजारियों के दल में तत्कालीन वास्तु तथा मूर्ति-कला से बहुत समानता है। इस चित्र में प्रयुक्त अर्द्धवृत्ताकार स्तूप, तोरण द्वार, पुरुषों के मुरेठे जिनमें लट्टूनुमा बड़ा मोती आगे माथे पर निकला है, तत्कालीन प्रस्तर उरेहन में भी प्रचलित थे। इस चित्र में पुरुषों के वर्गाकार चेहरे, बड़े-बड़े मोतियों की मालाएँ, भारी आभूषण उस समय की आंध्र प्रदेश की मूर्तियों की याद दिलाते हैं। इन आकृतियों में लटकते हुए कमर-बंद तथा निकले हुए पेट दर्शनीय हैं। गुफा में प्रवेश करते ही बायीं ओर जो लेख हैं, वे अनुमानतः ईसा पूर्व के हैं। इन चित्रों की अपनी विशेषताएँ हैं, जो इनको गुप्तकालीन चित्रों से पृथक कर देती हैं। उदाहरणार्थ इन चित्रों में कुल चार रंगों का प्रयोग है। ये रंग, काले, पीले, हरे तथा हरौंजी के लाल रंग हैं। इन आकृतियों के चेहरे तथा मुद्राएँ एक प्रकार की हैं। आँखें भावरहित हैं और आकृतियों की हस्त मुद्राएँ शिथिल हैं। नवीं गुफा में इसके अतिरिक्त अनेक प्रकार के वृक्षों तथा फलों का अंकन किया गया है, जिसमें चित्रकार ने अपनी निरीक्षण शक्ति का परिचय दिया है। यहाँ स्तम्भों पर बुद्ध आकृतियाँ चित्रित हैं और भित्तियों पर चरवाहों के दृश्य भी बनाये गए हैं।

दसवीं गुफा के चित्र—इस गुफा की दाहिनी भित्ति पर आज से लगभग
वर्ष पूर्व तक अधिक चित्र थे। ये चित्र प्रारम्भिक शैली के थे। इनमें विशेष रू
शक्तिशाली स्वतंत्रत रेखाओं से हाथियों का अंकन किया गया था। इस चित्राव
छःदन्त जातक की कथा चित्रित है जिसमें चित्रकार ने घने जंगल का अंकन सुं
से किया है और नाना प्रकार के वृक्ष जैसे बरगद, गूलर तथा आम के वृक्ष चि
किये गए हैं। इस जंगल के दृश्य में हाथियों को जलक्रीड़ा में मग्न चित्रित किया
है। इनमें छःदन्त हाथी अपनी हथनियों को सूंड से कमल पुष्प देते या कहीं पर अ
लिए अजगर से बचाते चित्रित किया गया है।

दूसरी ओर जंगल में व्याघ्र प्रवेश करते हैं और छःदन्त हाथी रूपी बोधिसत्व
उनके आगे समर्पण कर देते हैं। अन्तिम दृश्य में व्याघ्र काशीराज के अंन्तःपुर में पहुँ
हैं। काशीराज की रानी सुभद्रा पूर्वजन्म में छःदन्त गज की हथनी थी, अतः डाहवश
छःदन्त गजराज के दाँतों को काटकर लाने की आज्ञा देती है और कटे दाँतों को क
के कंधों पर बंहगियों पर लदा देखकर मूर्छित हो जाती है, राजा सहारा देता है—
दासियाँ जो पीछे खड़ी हैं घबराई हुई हैं—एक दासी सहारा देने को बढ़ रही है। यह
कलाकार ने बड़ी सुंदरता से अंकित किया है। परन्तु इस चित्र का पर्याप्त भाग दर्शक
अपना नाम लिख-लिखकर खुरच डाला है।

बायीं भित्ति पर एक जलूस के दृश्य का चित्रण है इसमें आगे पैदल, राशरत्र घुड़
और पीछे स्त्रियों के दलों को तीव्र गति से आगे बढ़ते हुए अंकित किया गया है, इस
में राजा को आठ स्त्रियों के बीच में चित्रित किया गया है। इस चित्र की योजना
सुगठित है, और कुछ आकृतियों को संतोषजनक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया गया है। इस
में हस्त मुद्राओं और भुजाओं का चित्रण स्वाभाविक तथा गोलाई युक्त है।

इस गुफा में ही श्याम जातक का चित्र है। श्याम जातक तीसरी शताब्दी में चि
किया गया है। इस चित्र में अंधे माता-पिता की सेवा करने वाले एक काले वर्ण के यु
'श्याम' को काशीराज के द्वारा तीर से मार देने की कथा आती है। कंधे पर घड़ा
श्याम की आकृति सुंदर है और माता-पिता की आकृति में वेदना है। भागते हुए हि
का अंकन भी मार्मिक है।

इस गुफा के स्तम्भों पर जो बुद्ध चित्र खड़ी मुद्रा में बनाये गए हैं और उनके क
तथा सिर के पीछे प्रकाश पुंज (तेज मण्डल) दर्शाये गए हैं उनमें गांधार शैली का प्र
है। विन्सेंट स्मिथ के अनुसार ये चित्र अनुमानतः पाँचवीं शताब्दी या बाद के हैं।

सोलहवीं गुफा के चित्र—इस सम्पूर्ण गुफा के गर्भ में आज से लगभग अस्सी
एक सौ वर्ष पूर्व अधिक चित्र थे, परन्तु अब बहुत से चित्र नष्ट हो चुके हैं। ग्रि
महोदय ने इस गुफा के एक मुख्य चित्र 'बुद्ध-उपदेश' को प्रकाशित किया है। इसी
का एक दूसरा चित्र इस गुफा में है। इस चित्र में बुद्ध की मुखाकृति नष्ट हो चुकी है,

उनके भक्तों की आकृतियों को कम क्षति पहुँची है। भक्तों में एकाग्रचित्तता और भक्तिमय नम्र दृष्टि दिखाने में कलाकार को अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई है।

सोलहवीं गुफा की दाहिनी भित्ति पर सुजाता की कहानी चित्रित है। इसमें गायों का चित्रण सुंदर है और भवन में गुप्तकालीन प्रस्तर शिल्प जैसी ज्यामितिक तरह से जालियाँ काटी गई हैं।

इस गुफा की बाँयी भित्ति पर उन चार दृश्यों (वृद्ध, पुरुष, शव, वृषभताड़न तथा वैरागी) का चित्रण है जिन्हें देखकर बुद्ध को वैराग्य उत्पन्न हुआ था। इसी गुफा में एक स्थान पर माया देवी के स्वप्न का दृश्य भी अंकित है। इस चित्र की पृष्ठभूमि वाले भाग में हाथी के दो दाँत भी अंकित थे, परन्तु अब इस चित्र में माया देवी की आकृति के केवल पैर ही शेष बचे हैं। ग्रिफिथ्स महोदय ने जिस समय इस चित्र को देखा था तो उस समय बुद्ध की आकृति को छोड़कर शेष भाग सुरक्षित था। इसी चित्र में एक ओर महाराज शुद्धोधन तथा माया देवी स्वप्न की चर्चा करते सोच-विचार में लीन दर्शाये गए हैं। माया देवी के चारों ओर दासियाँ अत्यन्त सुंदर मुद्राओं में बैठी हुई हैं, परन्तु उनकी आँखों के चित्रण में निर्बलता-दृष्टिगोचर होती है। इस गुफा में ऊपर की ओर बुद्धजन्म से सम्बन्धित कथाओं में बुद्ध के जन्म के पश्चात उनके सात कदम चलने वाली कथा को सात पद चिन्ह बनाकर प्रतीकात्मक ढंग से दिखाया गया है साथ ही भगवान बुद्ध को भी बालक के रूप में इस कथा में चित्रित किया गया है। यहीं पर बुद्ध के जन्म-स्थान लुम्बनी वाटिका के दृश्य भी सुंदरता से बनाये गए हैं। इन कथाओं के अतिरिक्त बुद्ध की पाठशाला के दृश्य अंकित है जिनमें बालकों की मनोरम क्रीड़ाएँ अंकित की गई हैं।

सोलहवीं गुफा में एक सबसे उत्कृष्ट चित्र है जो 'मरती राजकुमारी' के नाम से विख्यात है। इस चित्र की डॉ० बर्गीस (Burgess) तथा श्री फर्गुसन ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इस चित्र में एक कुलीन महिला ऊँचे आसन पर लेटी है और उसके पीछे एक दासी उसको सहारा देकर ऊपर उठाये है। पीछे खड़ी एक अन्य दासी अपनी छाती पर हाथ रखे है और एक महिला की ओर देख रही है। दूसरी दासी पंखा झल रही है—सफेद टोपी लगाये एक वृद्ध पुरुष दरवाजे पर खड़ा है और दूसरा एक खम्भे के पास बैठा है—सामने की ओर दो स्त्रियाँ बैठी हैं। दूसरे प्रकोष्ठ में दो स्त्रियाँ हैं जिनमें से एक पारसी टोपी पहने है और हाथ में कलश लिए है जिस पर जलपात्र ढका हुआ है। दूसरी युवती के बाल नीग्रो जैसे हैं और वह कुछ माँग रही है। दूसरी ओर दो परिचारिकाएँ एक अलग प्रकोष्ठ में बैठी हैं। इस मरणासन्न कुलीन महिला का सिर गिर रहा है, आँखें बंद हैं और उसके अंग-अंग मरण-पीड़ा से विक्षिप्त हैं। एक परिचारिका इस महिला की नाड़ी देख रही है, उसके चेहरे पर मृत्यु के आतंक की एक विषादमय छाया है। पंखा झलने वाली स्त्री तथा दो पुरुषों की मुखाकृति पर भी दुःख का भाव है। फर्श पर नीचे बैठे हुए सम्बन्धियों ने जैसे जीवन की आशा ही त्याग दी हो और उन्होंने रुदन आरम्भ कर दिया है। इस दल में एक स्त्री अपने हाथों से अपना मुख छिपाए रो रही है।

दया और करुणा के भाव को उद्दीप्त करने के दृष्टिकोण से यह चित्र एक सफल अभिव्यक्ति है। यूरोप में वेनिस के कलाकारों ने विविध वर्णों का उत्तम विधान प्रस्तुत किया है और फ्लोरेंस के कलाकारों ने कितना ही शक्तिपूर्ण रेखांकन करके चित्र बनाये हों, परन्तु वे फर्गुसन के मतानुसार 'भावों की इतनी मार्मिक और सशक्त अभिव्यक्ति की सफलता को प्राप्त नहीं कर सके। हैं।'

सत्रहवीं गुफा के चित्र—सत्रहवीं गुफा के चित्र सोलहवीं गुफा के चित्रों के बाद के हैं परन्तु ये चित्र पहले से अधिक खराब अवस्था में हैं। डॉ० बर्गीस ने इस गुफा में लगभग ३१ दृश्यों का वर्णन दिया है परन्तु अब बहुत कम चित्र प्राप्त हैं।

इस गुफा में घुसते ही बाहरी बरामदे की दीवार पर सुंदर चित्र थे जो नष्ट हो चुके हैं। द्वार के दोनों ओर किसी समय बोधिसत्व के चित्र बने रहे होंगे परन्तु अब इनके केवल मुकुट मात्र ही रह गए हैं। इस गुफा की छत में सुंदर आलेखन बनाये गए हैं।

इस गुफा के अंदर अनेक सुंदर चित्र हैं जिसमें नलगिरि नामक हाथी के आक्रमण के भी कई दृश्य हैं, किन्तु इन चित्रों के रंग फीके पड़ गए हैं और कई अंश पलस्तर के साथ गिर गए हैं। यहीं पर एक षडरचक्र का भी आलेखन किया गया है। इस चक्र के केन्द्र में अनेक प्रकार की आकृतियाँ हैं। इस चित्र में कई दृश्य, जैसे बाजार, उद्यान, गोष्ठी आदि के दृश्य हैं। इस चक्र को एक व्यक्ति हाथ फैलाकर पकड़े हुए है, सम्भवतः यह कोई दार्शनिक तत्व अंकित किया गया है। इसके किनारे सर्पाकार नदी का बाढ़युक्त जल का प्रवाह अंकित है जिसके भय से लोग भाग रहे हैं। अधिकांश विद्वानों ने इसे संसृति का चित्र माना है। इस प्रकार के चित्रों के अंकन की परम्परा तिब्बत में भी दिखाई पड़ती है। इसी गुफा में अनेक महत्त्वपूर्ण जातक कथाओं के चित्र अंकित हैं जिनमें छःदन्त जातक, महाहंस जातक, श्याम जातक, सुसोम जातक, महिष जातक, सिंहलावदान, शिविजातक, मृगजातक आदि हैं। इसी गुफा में मातृ-पोषक जातक की कथा भी सुंदरता से अंकित की गई है। मातृपोषक जातक की कथा इस प्रकार है—'एक बार बुद्ध श्वेत हाथी के रूप में अवतीर्ण हुए थे, उनको पकड़कर काशीराज के पास लाया गया परन्तु यहाँ उन्होंने अपनी माँ के वियोग में दाना-पानी छोड़ दिया, काशीराज को जब यह ज्ञात हुआ तब उन्होंने श्वेत हाथी को पुनः जंगल भेज दिया।' इस जातक कथा के अंकन में चित्रकार ने हाथी के माँ से पुनः मिलन की दशा को बड़ी मार्मिक दृष्टि से अंकित किया है। इस जातक कथा के अंतिम दृश्य में श्वेत गज अपनी सूंड से अपनी अंधी माँ को सहलाते हुए दिखाया गया है।

इस गुफा में 'मार-विजय' का भव्य चित्र अंकित है। एक दूसरे चित्र में बुद्ध धर्मचक्र प्रवर्तन मुद्रा में ध्यानमग्न हैं और चारों ओर एकत्र उनके भक्तजन दर्शाये गए हैं। यह भक्त वस्त्राभूषणों से सुसज्जित हैं और अनुमानतः अभिजात वर्ग के हैं। कुछ व्यक्ति हाथी पर बैठे हैं। यहाँ पर बोधिसत्व की पृष्ठभूमि में एक पर्वत के अन्तर्गत दर्पण में सखियों सहित मुख देखती हुई एक स्त्री का चित्रण अपने अनुपम सौन्दर्य के लिए विख्यात है।

यहीं पर वेस्सान्तर जातक की मार्मिक कथा का दृश्य भी चित्रित है। इस चित्र में बोधिसत्व राजा भावपूर्ण हस्तमुद्रा धारण किये आसन पर बैठा चित्रित किया गया है, सामने एक भिक्षुक अपने कुरूप दाँत निकाले कुछ भिक्षा याचना कर रहा है। उसकी याचना से सारा राज परिवार चकित है। राजा के पीछे बैठी स्त्रियाँ चिंतित हैं। यहाँ भिक्षु राजा की दानशीलता का यश सुनकर एक यज्ञ में बलि देने के लिए उसके राजकुमार पुत्र को भिक्षा में प्राप्त करने आया है—राजकुमार तैयार है। पीछे एक सेवक पात्र में जल ले आया है जिससे यह प्रतीत होता है कि राजा ने इस महादान का संकल्प कर लिया है। इस चित्र में हस्त-मुद्राएँ तथा नेत्रों के भाव उल्लेखनीय हैं। चित्र की रेखाएँ भी सुडौल तथा शक्तिशाली हैं—विशेष रूप से भिक्षु के कुरूप चेहरे, गंजे सिर, पोपले मुँह से बाहर निकले दाँत, गालों की उठी हड्डी, भारी ठुड्डी आदि के अंकन में कलाकार ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि का परिचय दिया है।

यहाँ पर एक बहुत ही महत्वपूर्ण चित्र अंकित है जिसमें कई सौ चेहरों का अंकन किया गया है। इस चित्र में सुंदरियों के दलों, सवारियों, राज्याभिषेक, दरबार आदि के पक्षों का सुंदर चित्रण हुआ है। इसी चित्र में डाकिनियों का युद्ध भी विशेष महत्त्व का है। अजन्ता के चित्रकार ने सुंदरता में ही रुचि प्रदर्शित नहीं की है बल्कि कुरूप तथा भयानक रूपों के अंकन में भी पूर्ण सफलता प्राप्त की है।

इस गुफा में ही 'राहुल-समर्पण' नामक भव्य चित्र अंकित है। इस चित्र में बुद्धत्व प्राप्ति के पश्चात यशोधरा से मिलन दिखाया गया है—बुद्ध ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् कपिलवस्तु पधारते हैं। वे यशोधरा के द्वार पर याचक के रूप में आते हैं, यशोधरा भिक्षा में अपने जीवन आराध्य देव को पुत्र राहुल जैसी एक मात्र निधि से बढ़कर क्या दे सकती थी ? यशोधरा भगवान के सम्मुख राहुल को समर्पित कर देती है। यहाँ पर बुद्ध को अन्य आकृतियों से बड़ा बनाया गया है। इसका कारण यह है कि बुद्ध साधारण मानव से महान थे। अतः उन जैसी महान आत्मा को विशाल रूप देकर उनकी महानता को स्थापित किया गया है। इसी गुफा में सिंहलावदान की कथा के चित्रण में सिंहल के यात्रियों का समुद्र में पोत टूट जाने पर राक्षस जाति के लोगों से युद्ध का दृश्य सुंदर ढंग से चित्रित किया गया है। इसमें युद्ध की गति, योद्धाओं की भंगिमाएँ तथा अस्त्र-शस्त्र सुंदर है।

इसी गुफा का एक अन्य चित्र जिसकी कथा 'महाहंस जातक' पर आधारित है, अपने अनुपम वर्ण-विधान के कारण अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर चुका है। इस चित्र की कथा इस प्रकार है—'बुद्ध एक जन्म में स्वर्ण हंस के रूप में अवतीर्ण हुए। इसी समय काशीराज की रानी खेम ने स्वप्न में स्वर्ण हंस देखे, इस कारण राजाज्ञा से बहेलियों ने स्वर्ण-हंस रूपी बुद्ध और सुमुख हंस को पकड़कर काशीराज की सेवा में ला प्रस्तुत किया। काशीराज की सभा में स्वर्ण-हंस राजा को उपदेश देता है और काशीराज बुद्ध को सिंहासन पर बैठाते हैं और उनसे उपदेश ग्रहण करते हैं। काशीराज सुमुख हंस सहित बुद्ध को छोड़ देते हैं। यहाँ से वे चित्रकूट

की ओर चल देते हैं।' बुद्ध ने जातक कथा में बताया कि—'पूर्वजन्म में बहेलिया, चन्ना, र खेम, धाया खेम, सुमुख हंस, आनंद और काशीराज सरिपुत्र हुए और स्वर्ण-हंस स्वयं मैं थ इस चित्र में राजा सिंहासन पर विराजमान है, पीछे चमरधारी परिचारिकाएँ हैं—एक परिचारि के हाथ में छत्र है। एक परिचारक का रंग नीग्रो जैसा है, राजा के नीचे पेरों के समीप बहेलि बैठा हुआ है। उसके शरीर का रंग गहरा लाल है। मध्य में हंस एक सिंहासन पर विराजम है। हंसों के ऊपर राजा ने सम्मान सूचक छत्र लगवा दिए हैं। पृष्ठभूमि में आलेखनों से यु कनात खड़ी है। चित्र के अग्रभाग में एक झील है। जिसमें गुलाबी कमल, अनेक जल-पु तथा जल-पक्षी हैं। इस चित्र में अजन्ता की कला का वर्ण-विधान सर्वोच्च शिखर पर पहुँ गया है और लाल, सफेद तथा गहरे हरे रंगों का संतुलन उल्लेखनीय है।

उन्नीसवीं गुफा के चित्र—यह गुफा चैत्य गृह है। इसमें पत्थर को काटकर अधि अलंकरण कार्य किया गया है। चित्रों में गौतम बुद्ध के चित्र और सामने की ओर बने ह के आलेखन सुंदर हैं।

छठी गुफा के चित्र—उन्नीसवीं गुफा के समान ही छठी गुफा में भी कुछ चित्र प्रा हैं। इनमें केश संस्कार से युक्त एक सुंदरी तथा द्वारपालों के कुछ चित्र किसी कुशल चित के बनाये हुए हैं।

ग्यारहवीं गुफा के चित्र—यहाँ पर हस्ति जातक की कथा तथा नन्द की कथा अ उनकी विरह व्याकुल रानी के सुंदर चित्र हैं। एक चित्र में एक बांध के किनारे कुछ बाल और स्त्रियाँ सरोवर में स्नान कर रही हैं। इस चित्र में एक राक्षस भी है परन्तु इस चि की आकृतियों की लिखाई में निर्बलता है।

पहली और दूसरी गुफाओं के चित्र बाद में बनाये गए हैं। दूसरी में अकेली आकृति सुंदरता से बनायी गई हैं साथ ही कलाकार ने जटिल अंग-भंगिमाओं और मुद्राओं व अंकित करने का प्रयास किया है।

पहली गुफा के चित्र—इस गुफा में कई सुंदर कथाओं के दृश्यों का अंकन मिलता छतों पर सुंदर अलंकरण चित्रित किये गए हैं। (देखिये रेखाचित्र—अलंकरण अभिप्राय) इ गुफा में शिविजातक की कथा, विरहणी, नागराज की सभा का दृश्य, शंखपाल जात मारविजय तथा पुलकेशिन की सभा का दृश्य विशेष उल्लेखनीय चित्र हैं। शिविजातक की क का रूप पौराणिक है। इस चित्र में चित्रित चेहरे लम्बे तथा आलेखन मध्यकालीन हैं। चित्र लिखाई मोटी-मोटी रेखाओं से की गई है जिससे हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि यह गु बाद में चित्रित की गई होगी। यहाँ पर विरह की पीड़ा से विह्वल एक सुंदरी का चित्र इस सुंदरी की विरह वेदना की कहानी कई सखियाँ जान गई हैं, और उसकी व्यथा को करने का प्रयत्न कर रही है। इस चित्र में सजीवता है और आकृतियों की हस्त मुद्राओं त बालों के शृंगार के आलेखनों में कोमलता है किन्तु आकृतियों की शारीरिक रचना में भारी है। कटिभाग अति क्षीण है तथा कहीं-कहीं भृकुटियों को एक ही रेखा से बनाया गया

रेखाचित्र सं० २

अलंकरण अभिप्राय (अजन्ता) गुफा—१, छत्त)

इस गुफा में ही बायीं भित्ति पर नागराज सभा का चित्र अंकित है। इस सभा में नृत्य का अंकन है और दरबारी चहल-पहल एवं राजसी ठाठ-बाठ सुंदरता से दिखाया गया है। राजदम्पति के पीछे चमरधारिणी बड़ी ही मनोरम मुद्रा में अंकित की गई है।

मार-विजय के चित्रण में चित्रकार ने अपनी पूर्ण योग्यता का परिचय दिया है। यह चित्र पर्याप्त नष्ट हो चुका है। जब बुद्ध बोधिसत्व प्राप्ति के समीप पहुँच गये थे तो कामदेव ने तप डिगाने के लिये आक्रमण किया इसी घटना को लेकर यह चित्र बनाया गया है। इस दृश्य में अनेक कामुकतापूर्ण, भयंकर एवं क्रूर आकृतियाँ उपस्थित की गई हैं। एक ओर तपस्वी रूप में ध्यान मग्न बैठे हुए बुद्ध को एक लाल बौना आँखें फाड़कर देखते हुए डराने का प्रयत्न कर रहा है, एक भयानक आकृति तलवार चला रही है और इसी प्रकार की नाना आकृतियाँ बुद्ध को आतंकित करके तप से डिगाने का प्रयत्न कर रही हैं।

रेखाचित्र सं० ३

अलंकरण अभिप्राय

रेखाचित्र सं० ४
अलंकरण अभिप्राय

एक दृश्य में चालुक्य सम्राट पुलकेशिन द्वितीय की राजसभा में आये फारस के बादशा खुसरो परवेज़ के राजदूत को चित्रित किया गया है। इस चित्र से भारत तथा फारस मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों का ज्ञान होता है। इसी गुफा में 'चम्पेय जातक' की कथा का अंकन भी है बुद्ध एक जन्म में नागराज थे। वे पकड़कर काशीराज की सभा में लाये जाते हैं। यहाँ पर काशीराज को उपदेश देते हैं। राजा नागराज को सिंहासन पर बिठाता है और महिलाएँ तथ राज-परिवार के सदस्य उनको चारों ओर से घेरे खड़े हुए अंकित किये गए हैं।

इसी गुफा में वज्रपाणिं तथा पद्मपाणि बोधिसत्व के उत्कृष्ट चित्र अंकित (देखिये रेखाचित्र—बोधिसत्व पद्मपाणि तथा बोधिसत्व वज्रपाणि)। असीम दया तथ करुणा के भावों ने इन चित्रों को विश्व-विख्यात कर दिया है। पद्मपाणि-बुद्ध चित्र में बुद्ध भगवान की आकृति पांच फुट साढ़े नौ इंच × दो फुट साढ़े पांच इंच विस्तार में पर्याप्त बड़ी बनायी गई है। चित्र की रेखाओं में प्रवाह और शक्ति है। बु के दोनों ओर गण बनाये गए हैं और बुद्ध लम्बी मालाओं से सुसज्जित हैं। बुद्ध एक ओर राजकुमारी का चित्र है जिसे काली राजकुमारी के नाम से ही पाश्चात लेखकों ने सम्बोधित किया है। परन्तु स्व० रायकृष्ण दास का मत है कि सिंदूर चित्रांकन होने के कारण आकृति के रंग काले पड़ गए हैं। उनके अनुसार चट्टानों गंधक का अंश रहा होगा जो जल में घुलकर वर्षाकाल में चित्र के ऊपर चट्टानों बहकर आया होगा और चित्र पर अपना प्रभाव डालता रहा होगा। इस कारण गंध के प्रभाव से चित्र में सिंदूर का रंग काला पड़ गया है।

रेखाचित्र सं० ५
अलंकरण अभिप्राय

रेखाचित्र सं० ६
"बोधिसत्व पद्मपाणि" (अजन्ता गुफा-१, सातवीं शताब्दी)

रेखाचित्र सं० ७

बोधिसत्व वज्रपाणि (अजन्ता भित्तिचित्र, सातवीं शताब्दी)

इस गुफा में कलाकार ने एक ब्रेकिट के ऊपरी भाग पर सांडों की लड़ाई का सुंदर से अंकन किया है। इस चित्र में अत्यधिक गति, बल और सुडौलता है। इस चित्र से ज्ञा होता है कि अजन्ता के कलाकार को पशुओं का अच्छा ज्ञान था। विन्सेंट स्मिथ के अनुस इस गुफा की छत के आलेखन सातवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में बनाये गए थे। छत के आलेखन पूर्ण विवरण सहित लिखे गए हैं। (देखिये रेखाचित्र—अलंकरण अभिप्राय)

दूसरी गुफा के चित्र—इस गुफा में जातक कथाओं तथा सभाओं के चित्र सं हैं। दाहिनी ओर एक अज्ञात सभा तथा महाहंस जातक का चित्र है। इस गुफा की बा भित्ति पर 'माया का स्वप्न', 'तृषित-स्वर्ग' तथा बुद्धजन्म के चित्र हैं। 'माया का स्वप चित्र में महादेवी माया शयन कक्ष में सो रही हैं। इस चित्र में कलाकार ने सफेद ग आकार या प्रताप पुंज के प्रतीक से स्वप्न की कथा का चित्र में निरूपण किया तृषित स्वर्ग वाले चित्र में बुद्ध को स्वर्ग के सिंहासन पर विराजमान भव्य रूप में अं किया गया है। उनके मुखमंडल के चारों ओर प्रभापुंज हैं और हाथ धर्म चक्र मुद्रा हैं, उनके दोनों ओर मकर बने हैं और बुद्ध की दृष्टि चिन्तनपूर्ण है। पास में देवताओं की आकृतियाँ उनको सम्मान की दृष्टि से देख रही हैं। इस चित्र में आकृति की अंग-भंगिमाओं तथा मुद्राओं का अच्छा अंकन है।

रेखाचित्र सं० ८
राजा के चरणों पर नर्तकी
(अजन्ता गुफा नं० २ सातवीं शताब्दी)

रेखाचित्र सं० ६
युगल रानियाँ (अजन्ता गुफा)

रेखाचित्र सं० १०

अप्सरा (अजन्ता गुफा-१७, पाँचवीं शताब्दी)

बुद्ध-जन्म वाले चित्र में 'महामाया' तथा शुद्धोधन को स्वप्न की चर्चा करते दिख
गया है। उनके चारों ओर दास-दासियाँ खड़े हैं। दासियों की अंग-भंगिमाएँ सुंदर हैं। सा
दो ब्राह्मण हैं, दाहिनी ओर महामाया के समान ही रत्नाभूषणों से सुसज्जित एक स्त्री स
के सहारे खड़ी है। श्री रायकृष्ण दास ने इस आकृति को राजकुल महिला महाप्रजापति
बुद्ध की विमाता माना है। महाप्रजापति एक कोमल लतिका के समान बायाँ पैर ऊपर उ
खड़ी हैं उनका पैर स्तम्भ के सहारे टिका है और वे उसी के सहारे खड़ी हैं।

बुद्ध जन्म वाले दृश्य में शाल वृक्ष की डाल पकड़े महामाया उपवन में खड़ी हैं, उपवन के बाहर भिखारी हैं। इस चित्र में इन्द्र चौकोर टोपी लगाये हैं और तीन नेत्रों से युक्त दर्शाया गया है।

इसी गुफा में एक वैराग्य सूचक साधु का चित्र है परन्तु कुछ लेखकों ने इसे सर्वनाशसूचक साधु या राजदूत माना है। यह वृद्ध साधु एक लकड़ी के सहारे खड़ा है और एक हाथ की मुद्रा से 'सबकुछ मिथ्या है' के संदेश (भाव) को अभिव्यक्त कर रहा है। उसके नेत्रों तथा चेहरे में भी यही भाव है।

इसी गुफा में 'विदुर पंडित जातक' और 'झूला-झूलती राजकुमारी' के चित्र हैं। यह झूला-झूलती राजकुमारी मदमाते पूर्ण यौवन के प्रतीक झूले पर झूल रही है। यहाँ पर एक और सुंदर चित्र है जिसमें शान्तिवादिन मुनि की कथा का अंकन है। एक जन्म में बुद्ध शान्तिवादिन मुनि के रूप में अवतीर्ण हुए और काशीराज के अन्तःपुर की सब स्त्रियाँ उनके उपदेश सुनने गयीं। इस पर राजा ने उनके वध की आज्ञा दे दी। इस चित्र में राजा खड्ग लिये सिंहासन पर बैठा है, उसके पैरों पर गिरी कोमलांगी सुंदरियाँ भय से काँप रही हैं, तो कुछ भागना चाहती हैं और कुछ मुँह छिपाये चिन्तामग्न हैं। चित्र में सर्वप्रथम भय का भाव है। (देखिये रेखाचित्र–राजा के चरणों पर नर्त्तकी)

बाघ गुफाएँ

बाघ गुफाओं की स्थिति–बाघ गुफाएँ प्राचीन ग्वालियर रियासत में विन्ध्याचल पर्वत श्रेणी में स्थित थीं। परन्तु स्वतंत्रता प्राप्त होने के पश्चात् यह गुफाएँ मध्यप्रदेश के अन्तर्गत आ गयी हैं। १८१८ ई० में सर्वप्रथम इन गुफाओं का परिचय तथा विवरण लेफ्टीनेंट डेंजरफील्ड ने बम्बई से प्रकाशित किया। इन गुफाओं के चित्रों का १९०७ ई० से १९०८ ई० के मध्य में कर्नल सी० ई० लुआर्ड ने निरीक्षण किया और पुनः ये चित्र संसार के समक्ष आये। इन गुफाओं तक पहुँचने के लिये पहले महो रेलवे स्टेशन तक रेलगाड़ी से जाना पड़ता है ओर फिर महो से धारमार्ग के द्वारा बाघ कस्बे तक मोटर गाड़ियों से ८७ मील का मार्ग पार करना पड़ता है। यद्यपि बाघ कस्बे में ठहरने के लिये विश्रामगृह हैं, परन्तु शेष सुविधाओं के लिये पर्यटकों को अपनी व्यवस्था करनी पड़ती है। बाघ कस्बे से यह गुफाएँ दो या तीन मील की दूरी पर स्थित है। वर्षा-ऋतु में बाघ नदी में बाढ़ के कारण आने-जाने में असुविधा उत्पन्न हो जाती है, वैसे महो से पर्यटकों के लिये टैक्सी तथा मोटर-गाड़ियों की सुविधा प्राप्त हो जाती है।

बाघ का परिचय तथा गुफाएँ–बाघ की गुफाओं का नाम निकट स्थित गाँव 'बाघ' के नाम पर पड़ा है। बाघ गुफाओं को स्थानीय लोग पंच-पांडव गुफाओं के नाम से पुकारते हैं। यह गुफाएँ विन्ध्याचल पर्वत के दक्षिणी ढाल पर बाघ नदी के

किनारे स्थित हैं। जिस क्षेत्र में यह गुफाएँ काटी गई हैं वह बाघ नदी से १५० फुट ऊँचा है, परन्तु इस क्षेत्र में रेतीली चट्टानें होने के कारण गुफाओं के निर्माण में बहुत असुविधा हुई। यहाँ पर कुल नौ गुफाएँ हैं जिनके सम्मुख भाग की लम्बाई ७५० फुट है। पहली गुफा 'गृह' है जिसका क्षेत्रफल २३×१४ फुट है। यह गुफा कमरे के समान है, जिसमें चार स्तम्भ हैं। इस गुफा का बाहरी बरामदा गिर चुका है और गुफा की दशा खराब है। दूसरी गुफा 'पांडवों की गुफा' है। इस गुफा की दशा अच्छी है यद्यपि धुएं तथा चिमगादड़ों के कारण चित्र धूमिल पड़ गए हैं। यह गुफा एक वर्गाकार चैत्य है जिसके तीन ओर छोटी-छोटी कोठरियाँ काटकर बनायी गई हैं। बाहर की ओर स्तम्भों पर आधारित बरामदा है और पीछे एक स्तूपदार चैत्य या गर्भभाग है। तीसरी गुफा का स्थानीय नाम 'हाथी-खाना' या 'हस्तिखाना' है। यह भी सम्भवतः आवास के लिये बनायी गई होगी क्योंकि इस गुफा की कोठरियों को टेम्परा चित्रों से सुसज्जित किया गया है। इस गुफा का बाहरी बरामदा गिर चुका है। इस गुफा में दो मंडप (हाल) हैं। इस गुफा की दीवारों पर बुद्ध पूजा के चित्र बने हैं जिनसे अनुमान होता है कि यह गुफा चैत्यगृह थी और चौथी गुफा 'रंगमहल' है और इसमें अब भी सुंदर चित्रों के अवशेष सुरक्षित हैं। तीसरी और चौथी गुफा के मध्य २५० फुट खुरदुरी चट्टानें हैं परन्तु चौथी गुफा पाँचवीं से तथा पाँचवीं गुफा छठी से भीतर के द्वारों से सम्बन्धित है। चौथी गुफा के मध्य का मण्डप ८४ फुट लम्बा है। यहाँ पर दरवाजों पर ब्रेकिटों में जो मूर्तियाँ हैं, वह साँची की शैली से समानता रखती हैं। पाँचवीं गुफा ६५×४४ फुट क्षेत्रफल की गुफा है जिसमें दोनों ओर स्तम्भों की पंक्तियाँ हैं। इस गुफा में छतों, स्तम्भों तथा दीवारों पर टेम्परा चित्र बने हैं। छठी गुफा ४६ फुट का एक वर्गाकार मंडप (हाल) है जिसके साथ पाँच कोठरियाँ भी काटी गयी हैं। चौथी तथा पाँचवीं गुफा के सम्मुख २२० फुट का बरामदा है जो अब गिर चुका है। इस बरामदे के पीछे की दीवार पर ऊपरी भाग में ही चित्रों के समुचित अवशेष रह गए हैं। सातवीं, आठवीं तथा नवीं तीनों गुफाओं के विषय में बहुत कम ज्ञान हो पाता है क्योंकि इन गुफाओं की छतें गिर चुकी हैं और मिट्टी-चट्टानों तथा पत्थरों से दरवाजे बंद हो जाने के कारण भीतर प्रवेश करने का मार्ग अवरुद्ध हो गया है।

गुफाओं का समय—इन गुफाओं में कोई भी ऐसा लेख नहीं मिलता जिनसे इन महत्त्वपूर्ण कला-मंदिरों की गौरव गाथा का ज्ञान हो। यहाँ की चट्टानें भी इस योग्य नहीं थी कि उन पर लेख उत्कीर्ण किये जाते। प्रस्तर पर उभारन अलंकरण तथा मूर्तियों के निर्माण के लिये भी यह पत्थर की रेतीली चट्टानें उपयुक्त नहीं थीं। अतः अलंकरण के अभाव को पूरा करने के लिये चित्रकारी का प्रयोग ही किया गया है। इस प्रकार चित्रित प्रमाण ही लेखों का कार्य करते हैं। परन्तु दुर्भाग्यवश यह प्रमाण भी अधिकांश नष्ट हो गये हैं, केवल एक स्थान पर अक्षर 'क' हिरौंजी के रंग में

लिखा रह गया है। श्री एम० बी० गेरडे के अनुसार प्राचीन लिपि में 'क' छठी-सातवीं शताब्दी के प्रसंग में आया है और उनके अनुसार यही इन गुफाओं का समय माना गया है।" स्मिथ महोदय ने इन गुफाओं की चित्रकारी का समय ६२६-६२८ ई० माना है और इनको अजन्ता की पहली तथा दूसरी गुफा की चित्रकारी का समकालीन बताया है परन्तु १६२६ ई० में पुरातत्व विभाग की ओर से इन गुफाओं की सफाई तथा जीर्णोद्धार करते समय दूसरी गुफा में महाराज सुबंधु का ताम्रपत्र मिला जिससे इन गुफाओं के निर्माण का ठीक समय निश्चित हो जाता है।

इस ताम्रपत्र पर उत्तीर्ण लेख के अनुसार माहिष्मती के महाराज सुबंधु ने बुद्ध के गन्धधूप, माल्यावलि, सूत्र, पूजा आदि की योजना के लिए, भग्न स्फुटित के संस्करण के लिए तथा आर्य भिक्षु संघ के चारों दिशाओं से आकर ठहरने पर उनके चीवर पिन्ड पालग्लान प्रत्यय 'शय्यासन भैषज्य' के लिए 'दासिलकपल्ली' नामक ग्राम दान में दिया है। इस ताम्रपत्र में अंकित लेख की चौथी-पाँचवी पंक्ति से यह ज्ञान होता है कि यह दान 'कलयन' (बाघ) नामक विहार को दिया गया। 'दासिलकपल्ली' ग्राम का अब कोई चिन्ह प्राप्त नहीं है।

इस अभिलेख के अनुसार विद्वानों का अनुमान है कि बाघ की गुफाएँ कलयन या 'कलायन' के नाम से पुकारी जाती थीं। इतिहासकारों ने महाराज सुबंधु का समय ४१६-४६६ ई० के मध्य माना है। इस प्रकार इस ताम्रपत्र से ऐसा ज्ञात होता है कि ये गुफाएँ महाराज सुबंधु के समय में बनकर तैयार हो गई थीं और इस प्रकार इनका निर्माणकाल चौथी-पाँचवीं शताब्दी माना जा सकता है।

गुफाओं की खोज तथा सुरक्षा—आधुनिक समय में इन गुफाओं की खोज १८१८ ई० में लेफ्टीनेंट डेंजर फील्ड नामक वास्तु-कला के विद्वान ने की, और फिर कई विद्वानों ने बाघ के सम्बन्ध में लेख लिखे। इनमें डब्ल्यू इरिस्किनी, ई० इम्पे, कर्नल सी० ई० लुआर्ड, स्व० असित कुमार हाल्दर तथा श्री मुकुलचन्द्र डे ने बाघ गुफाओं पर लेख प्रकाशित किए।

अंग्रेजी सरकार ने ग्वालियर राज्य में पुरातत्व विभाग की स्थापना के पश्चात् ही इन गुफाओं की समुचित सुरक्षा का प्रबंध कर दिया। सुरक्षा के लिए कई खिड़कियों तथा द्वारों को बंद कर दिया गया और गुफाओं की सफाई करायी गई। इन चित्रों की अनुकृतियाँ बनाने के लिए देश के प्रसिद्ध कलाकारों को अनुकृति चित्र बनाने का कार्य सौंपा गया। इन कलाकारों में स्व० नन्दलाल बसु, स्व० असित कुमार हाल्दर तथा श्री सुरेन्द्रनाथ कर (कलकत्ता), श्री ए० बी० भोंसले (ग्वालियर) तथा बी० ए० आपटे (बम्बई), श्री एम० एस० भाँड तथा श्री बी० बी० जगतप (ग्वालियर) थे। इनकी बनायी बाघ के चित्रों की प्रतिलिपियाँ ग्वालियर दुर्ग के गूजरी महल की एक बारहदरी में सुरक्षित थीं। इसके पश्चात् आरमीनियन चित्रकार सरकिस कचडोरियन ने भी बाघ के चित्रों की अनुकृतियाँ तैयार कीं।[८]

बाघ गुफाओं के चित्र

बाघ गुफाओं के सबसे अच्छे चित्र चौथी और पाँचवीं गुफा के बाहरी बरामदे की भीतरी दीवार या गुफाओं के सामने की दीवार पर ऊपर के भाग में सुरक्षित थे। परन्तु बरामदे की छत गिर जाने से पर्याप्त चित्र नष्ट हो गए हैं। इसके अतिरिक्त दर्शकों ने नाम लिख-लिखकर भी चित्रों को क्षति पहुचाई है।

पहला दृश्य—अधिकांश चित्र चौथी गुफा के सम्मुख भाग में प्राप्त हैं। इन चित्रों का सिंहावलोकन नितान्त दक्षिणी छोर से चौथी गुफा के द्वार से आरम्भ करेंगे। इस द्वार के ऊपर दो दृश्य अंकित हैं। पहले दृश्य में दो स्त्रियाँ एक छज्जे पर बैठी हैं जिसमें से एक शोकाकुल है और अपने दाहिने हाथ में लगे वस्त्र से अपने मुख को छिपाए है। उसका बायाँ हाथ किसी बात को व्यक्त करने की मुद्रा में फैला है। दूसरी स्त्री सम्वेदना और सहानुभूति में उसकी करुण-कहानी सुन रही है। इस छज्जे की छत पर नीले रंग से कबूतरों की जोड़ी बनायी गई है जो किसी प्रणय-प्रसंग का प्रतीक है। सम्भवतः यह किसी विरहणी का चित्र है। इस विरहाकुल स्त्री के चित्र को कुछ विद्वानों ने बुद्ध के विरह में व्याकुल यशोधरा का चित्र बताया है।

दूसरा दृश्य—दूसरे दृश्य में चार गहरे वर्ण के आभूषणधारी पुरुष किसी गंभीर वार्ता में निमग्न हैं। ये सब पुरुष आकृतियाँ पाल्थी बाँधे नीली तथा पीली आसनियों पर विराजमान हैं। इन आकृतियों की पृष्ठभूमि में उद्यान के फीके से चित्रण का आभास होता है।

तीसरा दृश्य—तीसरे दृश्य में स्पष्ट रूप से आकृतियों के दो समूह हैं जो एक के ऊपर एक बनाये गए हैं, परन्तु यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि यह एक ही प्रसंग के चित्र हैं या एक ही दृश्य की घटना हैं। ऊपर वाले भाग में छः पुरुष आकृतियाँ हैं, ये आकृतियाँ हवा में उड़ रही हैं और बादलों से आच्छादित हैं। नीचे वाले भाग में केवल पाँच सिर ही शेष बचे हैं जो स्पष्ट रूप से गायिकाओं के चित्र हैं क्योंकि बीच वाली स्त्री के हाथ में वाद्य यंत्र है। इन स्त्रियों के केश जूड़े में बंधे हैं। इस चित्र में नीले रंग से जड़ाऊ आभूषण बनाए गये हैं। यह नीला रंग लेपिसलाजुली है जिसका प्रयोग अजन्ता के चित्रों में भी किया गया है। लेपिसलाजुली रंग को उस समय फारस से आयात किया जाता था।

चौथा दृश्य—चौथे चित्र में स्त्री गायिकाओं के दो दलों को चित्रित किया गया है। यह चित्र बाघ के समस्त चित्रों में अपनी मंडलाकार व्यवस्था, लय तथा सुंदरता के कारण सबसे अधिक प्रसिद्ध हो चुका है। पहले दल में सात स्त्रियाँ एक अन्य आठवीं नर्तकी को चारों ओर से घेरे खड़ी हैं। नृत्य करने वाली स्त्री पूरी आस्तीन का चुस्त कुर्ता पहने है जो घुटने तक नीचा है, तीन स्त्रियाँ डंडे बजा रही हैं, एक

रेखाचित्र सं० ११

गायकदल (भित्तिचित्र) (बाघ गुफा नं०-४, पाँचवीं शताब्दी)

मृदंग बजा रही है और शेष तीन मजीरे (ताल) बजा रही हैं। यह स्त्रियाँ उरोजों पर या तो आस्तीनदार चोली पहने हैं या ऊपरी भाग में अर्धनग्न हैं।

दूसरे दल में एक नर्तकी को घेरे छः स्त्री गायिकाएँ मंडलाकार रूप में खड़ी हैं, नर्तकी के बाल कंधों पर लहरा रहे हैं। वह चुस्त कुर्ता तथा पतला पजामा पहने है। शेष छः गायिकाओं में से एक मृदंग बजा रही है, दो छोटे-छोटे मंजीरे बजा रही हैं और शेष तीन डण्डे बजा रही हैं। इनकी वेश-भूषा पहले वाली गायिकाओं के दल के समान ही है। इस चित्र में कुछ लेख दिया गया था परन्तु अब केवल 'क' स्पष्ट है। (देखिये रेखाचित्र–गायक दल)

पाँचवां दृश्य—पाँचवें चित्र में कम से कम सत्रह घुड़सवारों का एक दृश्य अंकित है। यह घुड़सवार बायीं ओर जा रहे हैं। वस्त्रों की तड़क-भड़क, घोड़ों की गति तथा राजकीय चिन्ह इत्यादि के कारण यह किसी राजा की शोभायात्रा या जुलूस का दृश्य प्रतीत होता है। घोड़ों का अंकन स्वाभाविकता से किया गया है। इस दल के चित्र में समस्त सवार चुस्त बाने के समान पोशाक पहने दर्शाये गए हैं और उनके सिर के पिछले भाग पर पीली या सफेद रंग की पगड़ी लगी है।

छठा दृश्य—छठे दृश्य में एक हाथियों का जुलूस दिखाया गया है। इस दल में छः हाथी और तीन घुड़सवार हैं, परन्तु घुड़सवारों में से अब केवल एक ही का चित्रण स्पष्ट दिखाई देता है। छठा दृश्य तोरण-द्वार के चित्रण से सातवें दृश्य से अलग हो जाता है। इस चित्र में एक व्यक्ति हाथ में कमल पुष्प धारण किये हाथी पर बैठा है, इसके सिर पर छत्र लगा है तथा पीछे एक अंगरक्षक चँवर झल रहा है।

सातवां दृश्य—सातवां दृश्य छठे दृश्य के विरोध में दूसरी ओर बनाया गया है। इसमें चार हाथी और तीन घुड़सवार अपने गन्तव्य स्थान तक आ गये हैं। हाथी विश्राम करने के लिए बैठ गए हैं। यहाँ पर दो पैदल आदमी हैं जिनके हाथ में तलवारें और भाले हैं। इन सब का ध्यान सामने के भवन पर केन्द्रित है। निकट ही आम के वृक्ष से नीला कपड़ा लटका है और नीचे जलपात्र तथा धर्मचक्र दर्शाये गए हैं। निकट ही एक केले का वृक्ष भी है जिसके नीचे बुद्ध बैठे हुए और एक शिष्य को उपदेश देते हुए अंकित हैं।

चौथी गुफा के उत्तर की ओर भी कुछ चित्रों के अवशेष है जो अधिक स्पष्ट नहीं हैं। छठी गुफा में गौतम बुद्ध के अनेक चित्र हैं, जिनमें 'उषनिश-बुद्ध' का सुंदर चित्र अवशेष मात्र रह गया है। इसी प्रकार इस गुफा की पाँचों भीतरी कोठरियाँ भी चित्रों से सजी हुई थीं। इन चित्रों की आकृतियाँ, भंगिमाएँ, अलंकरण तथा शैली अजन्ता के समान है, अतः इन चित्रों को अजंता शैली का माना गया है। आकृतियों के चुस्त कपड़े तथा शृंगार गुप्तकालीन मूर्तियों की याद दिलाते हैं।

बाघ गुफाओं में काले, सफेद तथा हिरौंजी के रंग के प्रयोग से उत्तम आलेखन बनाये गए हैं, जो लय तथा आकारों की पूर्णता में अजंता को मात करते हैं। इन आलेखनों में मनमुग्धकारी पक्षियों—शुक, सारिका, कुक्कुट, हंस, कोयल, मोर, सारस, चकोर तथा बत्तख आदि का कमल, कमलनाल, लताओं तथा पुष्पों के बीच-बीच में अंकन किया गया है। रंगीन चित्रों में नीले, लाल और पीले परस्पर विरोधी रंगों का प्रयोग किया गया है। रंगों की यहाँ दो शैलियाँ हैं जो सम्भवतः दो भिन्न-भिन्न कालक्रमों की परिचायक हैं।

बादामी की गुफाएँ

वात्यपिपुरम् नामक स्थान का आधुनिक नाम बादामी है। बादामी की गुफाएँ बीजापुर जिले के अन्तर्गत आईहोल के निकट महाराष्ट्र प्रान्त में स्थित हैं। वात्यपिपुरम् पर्वतों के बीच

सुरक्षित रूप से बसा हुआ था और अपने तालाबों, मंदिरों तथा झीलों के कारण किसी समय एक सुंदर नगर रहा होगा। परन्तु आज यह सभी काल के आघातों से नष्ट हो चुके हैं। बादामी के मध्य में एक पत्थर की शिला पर अभिलेख उत्कीर्ण है जो पल्लव राजा नरसिंह वर्मन का है। इस लेख के अनुसार इस पल्लव-वंशीय राजा नरसिंह वर्मन ने महान चालुक्य राजा पुलकेशिन द्वितीय की राजधानी बादामी को ध्वस्त कर दिया था। बादामी के चार गुफा मंदिरों में शिल्प तथा चित्रकला के उत्तम उदाहरण सुरक्षित हैं।

दक्षिण में वाकाटक वंश के पश्चात् चालुक्य वंश का उदय हुआ था। चालुक्य वंश में पुलकेशिन का पुत्र कीर्तिवर्मन और कीर्तिवर्मन का पुत्र पुलकेशिन द्वितीय प्रतापी राजा हुए। मंगलेश राजा कीर्तिवर्मन का छोटा भाई था और पुलकेशिन द्वितीय के पश्चात् चालुक्य साम्राज्य का शासक बना। वह भवन तथा कला प्रेमी शासक था। उसके राज्यकाल में बादामी की चौथी गुफा बनकर पूर्ण हुई। बादामी की चौथी गुफा (मुख्य-मंडप) शिल्प-सज्जा, चित्रकारी तथा वास्तु के दृष्टिकोण से श्रेष्ठ है। इस गुफा में मंगलेश के शासनकाल के बारहवें वर्ष का एक लेख प्राप्त है, जिसका समय शाका ५०० अर्थात् ५७८–५७९ ई० है। इस अभिलेख में बादामी की इस गुफा के निर्माण के सम्बन्ध में पर्याप्त सूचना दी गई है। इस लेख के अनुसार–विष्णु की प्रतिमा इस मुख्य-मंडप (चौथी गुफा) में स्थापित की गई और मंदिर में पूजा पाठ के लिये अनुदान स्वरूप 'लन्जीसवाड़' नामक ग्राम की जागीर इस मंदिर के प्रबंधन के लिये बाँधी गई थी। इस लेख के अनुसार यह गुफा मंगलेश ने बनवाई थी। बराह पैनल के समीप उत्कीर्ण इस लेख में इस प्रकार का संकेत है कि 'दर्शकों को मंगलेश की कला का रसास्वादन करने के लिये गुफा की छत, दीवारों तथा मूर्तियों की ओर देखना चाहिए।'

अजन्ता में उत्कीर्ण लेखों से स्पष्ट है कि अजन्ता के चित्र वाकाटक राजाओं ने बनवाये। इसी प्रकार बादामी के अलंकरण सम्बन्धी अभिलेखों से स्पष्ट है कि–'मंगलेश के दरबारी चित्रकारों ने अपने से पूर्व के वाकाटक कलाकारों की शैली को अपनाया।'

बादामी के चित्रों की खोज का श्रेय स्टेला क्रैमरिश को है। पहले बर्गीज़ तथा बनर्जी ने इस गुफा के बाहरी भाग में चित्रों के धुंधले चिन्ह पाये थे। बादामी गुफा के चित्र ब्राह्मण मंदिरों के सबसे पहले प्राप्त चित्र उदाहरण माने जा सकते हैं। बादामी की इस गुफा में जो भव्य शिल्प तथा चित्रकारी के नमूने प्राप्त हैं उनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि मंगलेश ने चित्रकारों को आश्रय दिया। सर्वप्रथम स्टैला क्रैमरिश ने इन चित्रों का अध्ययन किया और उन्होंने चित्रों के विषय को शिवविवाह से सम्बन्धित दृश्य बताया। यह चित्र बहुत खराब अवस्था में है। श्री कार्ल खण्डालावाला ने १९३८ ई० में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'इंडियन स्कल्पचर एण्ड पेंटिंग', (बम्बई) में बादामी का एक रंगीन चित्र प्रकाशित किया।

बादामी के भित्तिचित्रों की प्रतिकृतियाँ ललित कला अकादमी के निमंत्रण पर भारत के प्रसिद्ध चित्रकार स्व० जे० एन० अहिवासी तथा उनके सहायकों ने तैयार कीं। यह कार्य

श्री कार्ल खण्डलावाला तथा श्री के० के० हैब्बर की देख-रेख में किया गया। यह प्रतिकृतियाँ राष्ट्रीय संग्रहालय-नई दिल्ली ने ललित कला अकादमी से प्रदर्शन हेतु मंगवायीं और यहाँ वह जनता के लिये प्रदर्शित की गईं।

बादामी के मुख्य-मंडप (चौथी गुफा) की छत पर पैनलों में चार दृश्य बनाये गए हैं। इनमें से प्रथम दो ५'×५' आकार के हैं परन्तु दूसरे दो पैनल १', ५–३/४"×१',१०" आकार के हैं।

प्रथम दृश्य—यह दृश्य शिव-विवाह पर आधारित है। इस चित्र में एक विशाल महल के अन्तर्गत इन्द्र की सभा वैजयन्ता या देवताओं की सभा सुधर्मा का अंकन है। इस चित्र में इन्द्र की मुख्य आकृति नीलिमायुक्त हरे वर्ण की है और वह अपना एक पैर आसन पर रखे हैं तथा दूसरा पैर पदपीठा पर रखे आसीन हैं। इस आकृति का सिर नष्ट हो गया है। इसके दाहिने हाथ की उंगलियाँ कत्तकामुख मुद्रा में और बाएं हाथ की उंगलियाँ शिखरहस्त मुद्रा में बनायी गई हैं। इस आकृति की गरदन में कम्बुकन्ठा तथा कंधे पर मोतियों की लड़ियों से बना यज्ञोपवीत सुशोभित होता दर्शाया गया है। इस आकृति के बाएं कान का एक पत्राकार कुण्डल शेष रह गया है। इस आसनासीन आकृति के नीचे अनेक आकृतियाँ बैठी हैं। इन्द्र के पीछे पाँच चँवरधारणियों के दल में केवल एक जटाधारी पुरुष आकृति है, शेष सब स्त्रियाँ हैं। इस दल के ऊपर स्तम्भों पर आधारित दीर्घा में देवतागण राजसी ढंग से बैठे हैं। इस मुख्य आकृति से बायीं ओर चित्र में नर्तक-मंडली अंकित की गई है। इनमें दो नृत्य करती हुई आकृतियाँ बड़ी गतिपूर्ण मुद्रा में अंकित की गई हैं। इनमें से पुरुष नर्तक का मुख दर्शकों की ओर है। यह नर्तक चतुरा मुद्रा में नृत्य कर रहा है और उसका बायाँ हाथ दण्डहस्त मुद्रा में है और दाहिना हाथ कत्तकामुखमुद्रा में उठा चित्रित किया गया है। स्त्री नृतकी, जो नर्तक के सम्मुख है, का दाहिना हाथ दण्डहस्त मुद्रा और बायाँ हाथ कत्तकामुख हस्त मुद्रा में चित्रित है। पुरुष नर्तक के बाल जटाजूट आकार के हैं, उसके कानों में पत्र-कुण्डल चित्रित हैं और उसको प्रचलित आभूषण तथा वस्त्र, माला, अनन्त, कड़े तथा घुटनों तक धोती (आन्ध्रा-धोती) पहने दर्शाया गया है। स्त्री नर्तकी का वर्ण गहरा नीलिमायुक्त दर्शाया गया है। उसके बाल एक भव्य पगड़ीनुमा जूड़े में बँधे हैं, उसके कानों में पत्रकुंडल, भुजाओं पर अनन्त सुशोभित हैं। इन नर्तकों के समीप वाद्य-मंडली अनेक प्रकार के वाद्य यंत्र बजा रही है। इस वाद्य मंडली में सब स्त्रियाँ हैं। इनमें से दो बाँसुरी वादक हैं, एक ढोलक तथा एक अंक्य-मृदंग बजाती आकृति है और एक ताल (मंजीरा) बजाती स्त्री की आकृति चित्रित की गई है। इस चित्र में अनुमानतः स्त्री नर्तकी उर्वशी अप्सरा है जिसके सम्मुख काली पुरुष आकृति स्वयं ताँडू की आकृति है जो इन्द्र के सम्मुख अप्सरा के नृत्य कौशल का प्रदर्शन कर रहे हैं। कुछ दर्शक इस रंगारंग कार्यक्रम को ऊपर झरोखों में से देख रहे हैं।

दूसरा दृश्य—दूसरा चित्र एक राजमहल के कक्ष का दृश्य है। इस दृश्य में राजसी युगल का अंकन है। राजसी पुरुष महाराजलीला मुद्रा में अपना दाहिना पैर पदपीठा पर तथा बायाँ पैर आसन पर रखे, आसन पर विराजमान अंकित किया गया है। उसका बायाँ हाथ घुटने पर है और दाहिना हाथ त्रिपताका मुद्रा में है। उसके सिर पर ऊँचा मुकुट है तथा वह सामान्य आभूषण पहने है। यज्ञोपवीत उसके दाहिने कंधे से लहराकर लटक रहा है। उसके दाहिनी ओर मुकुट धारण किये अनेक युवराज धरती पर बैठे इस भव्य राजसी पुरुष के आदेश की प्रतीक्षा कर रहे चित्रित किये गए हैं, परन्तु अधिकांश आकृतियाँ अस्पष्ट हैं और नष्ट हो चुकी हैं। इन आकृतियों के छोर पर एक स्त्री प्रतिहारी की आकृति है जो नीचे शरीर में टखनों तक अपारदीना जैसा वस्त्र पहने हैं और हाथ में दण्ड धारण किये हैं। इस राजसी आकृति के बायीं ओर प्रसाधिकाएँ या परिचारिकाएँ रानी की सेवा में खड़ी हैं, रानी के पास ही राजकुमार भी चित्रित है। यह रानी एक नीचे आयताकार पीठ वाले आसन पर बैठी चित्रांकित की गई है, इस आसन में तकिये लगे हैं। इस रानी की सेवा में राजा के समान चँवरधारणियाँ खड़ी हैं जिनके केश खुले (धामिल्ला) या जटा-रूप में बनाये गए हैं। इनमें से एक के हाथ में दण्ड है। रानी की मुद्रा मनोरम है। उसका दाहिना पैर पदपीठा पर है और बायाँ पैर मुड़ा हुआ है और आसन पर रखा चित्रित है। उसका दाहिना हाथ आसन पर है, परन्तु बायाँ हाथ सोचिमुद्रा में दर्शाया गया है। उसके कानों से पत्र-कुंडल लटक रहे हैं। उसकी भुजाओं में अनन्त तथा भुजबंद हैं और वह ग्रीवा में मालाएँ पहने हैं। उसके बाल धामीला प्रकार के हैं और लहराते चिकुर उसके माथे पर बनाये गए हैं। वह कमर से नीचे जांघों पर धारीदार अर्धरूका पहने हैं। इस चित्र में लाल रंग का स्वस्थ राजसी पुरुष पल्लव नरेश कीर्तिवर्मन है, जिसको रानी के साथ चित्रित किया गया है। रानी का वर्ण गौर है। इन दोनों के नीचे तीन सेनानायक बैठे हैं जिनमें से एक गौर, एक ताम्र तथा एक हरे वर्ण का है। ऐसा विचार किया जाता है कि मंगलेश ने अपने भाई राजा कीर्तिवर्मन, जिसको वह बहुत प्रेम करता था, की स्मृति में यह चित्र बनवाया।[15] सम्भवतः यह राजा कीर्तिवर्मन के परिवार का चित्र है।

तीसरा तथा चौथा दृश्य—बादामी के इन दो खंडित दृश्यों में युगल विद्याधर बादलों में उड़ते हुए बनाये गए हैं। तीसरे दृश्य में विद्याधर तथा विद्याधरी अपने-अपने हाथ एक-दूसरे के गले में डाले हैं और उनके सिर पर मुकुट हैं। विद्याधरी के बाल धमीला ढंग में बंधे हैं और उसका रंग गहरा है परन्तु विद्याधर का वर्ण गौर दर्शाया गया है।

दूसरे युगल में आकृतियाँ अधिक सुंदर रूप में अंकित हैं। इस चित्र में विद्याधर कानों में कुण्डल पहने हैं परन्तु विद्याधरी के कान में कुण्डल नहीं हैं। विद्याधर का केश-विन्यास जटा-ढंग का है और कमल पुष्प से युक्त है। विद्याधरी वीणा बजा रही

है। इस दृश्य में पुरुष आकृति गहरे नीलिमायुक्त हरे वर्ण की तथा स्त्री आकृति गौर वर्ण की चित्रित की गई है।

सित्तन्नवासल की गुफा

यह गुफा दक्षिण भारत तमिलनाडु राज्य के अन्तर्गत तंजौर के निकट पदुकोट्टाई से उत्तर-पश्चिम की ओर नौ मील की दूरी पर कृष्णानदी के तट पर सित्तन्नवासल में स्थित है। यह स्थान पल्लव-राज्य के मध्य में स्थित था और सम्भवतः इन चित्रों को पल्लव वंश के महान शासक राजा महेन्द्र वर्मा (६०० ई० से ६२५ ई०) ने बनवाया था।

सित्तन्नवासल की गुफा को सर्वप्रथम टी० ए० गोपीनाथ राव ने देखा और उन्होंने इन चित्रों को उतना ही प्राचीन माना जितनी प्राचीन यह गुफा है।

सित्तन्नावासल के चित्र–सित्तन्नवासल गुफा जैन मन्दिर है। यह मंदिर एक चट्टान को काटकर बनाया गया है। पहले यह गुफा-मंदिर पूर्णतया चित्रों से अलंकृत था, परन्तु अब चित्र केवल छत में तथा स्तम्भों के ऊपरी भागों में शेष रह गए हैं। यहाँ पर भारी ओसरे (बरामदे) की छत में एक कमलवन का आलेखन है। इस भित्तिचित्र में एक सरोवर का दृश्य है जिसमें कमल पुष्प खिले हैं। इस सरोवर के बीच में एक मछली, हाथी, हंस, भैंसे तथा तीन दिव्य आकृतियाँ चित्रित हैं। यह तीनों दिव्य व्यक्ति हाथों में कमल धारण किये हैं। इन तीनों आकृतियों में से दो का गहरा लाल रंग है और एक का तेज़ पीला रंग है। इनकी मुद्राएँ और अंग-भंगिमाएँ सुंदर हैं। चित्रकार ने रंगों का विधान सुकोमल, सुंदर और सरल लिया है। गोलाई लाने के लिए सुकोमल छाया का प्रयोग भी किया गया है। स्तम्भों पर नृत्य करती हुई बालाओं तथा कमल पुष्पों के आलेखन बने हैं। एक स्थान पर एक कुलीन पुरुष का चित्र है। उसके बाएँ कंधे के पीछे प्रफुल्ल मुखमुद्रा वाली एक महिला की आकृति बनायी गई है। अनुमानतः यह राजा महेन्द्र और उसकी रानी के चित्र हैं। यहाँ पर 'अर्द्धनारीश्वर' का एक उत्कृष्ट चित्र अंकित है। इस चित्र में महादेव को शक्तिशाली रेखाओं के द्वारा अंकित किया गया है और चित्र की शैली अजन्ता तथा बाघ की चित्रशैली के समान है। इस चित्र में महादेव जटाओं के मुकुट का जूड़ा लगाये हैं और कानों में पत्र-कुण्डल पहने हैं, उनके नेत्रों में दिव्य ज्योति और शक्ति है।

एक अन्य पुरुष आकृति का चित्र जिसकी ग्रीवा मोटी बनायी गई है अनुमानतः एक गंधर्व का चित्र है। उसके हाथ में कमल है। इस आकृति के नेत्र, अंग-भंगिमाएँ तथा हस्त-मुद्राएँ कलाकार की शिल्प-कुशलता की द्योतक हैं। यहाँ पर नर्तकियों के भी अनेक सुंदर चित्र अंकित हैं। स्तम्भ पर बने एक चित्र में नृत्य की लय में मग्न एक नृत्यांगना अप्सरा का चित्रण किया गया है। इस चित्र में नृतकी अप्सरा की गति में और वर्ण सम्बन्धी योजना में कलात्मक दृष्टिकोण दिखायी पड़ता है। इस अप्सरा की ग्रीवा, भुजाओं, कानों आदि में रत्न-जटित सुंदर आभूषण चित्रित हैं। सौन्दर्य की

रेखाचित्र सं० १२

अप्सरा (भित्तिचित्र) (सित्तन्नवासल गुफा सातवीं शताब्दी)

साक्षात् मूर्ति के समान इस अप्सरा का पांडु-वर्णी शरीर कांतिवान आभा से जगमगा रहा है। (देखिये रेखाचित्र—'अप्सरा'-सित्तन्नवासल)। सित्तन्नवासल गुफाओं के चित्रों की शैली अजन्ता के समान ही है। इस प्रकार की चित्र शैली अजन्ता की श्रेष्ठ चित्रकारी के समय में ही दिखायी पड़ती है। अतः इन गुफाओं के चित्रों की शैली को अजन्ता की परिपक्व शैली का रूप माना जाता है।

सिगिरिया की गुफाएँ

भारतीय बौद्ध-भिक्षु धर्म के प्रचार हेतु सुदूर पूर्वी तथा दक्षिणी देशों की ओर गए और उनके साथ ही भारतीय-चित्रकारी, धर्म तथा दर्शन आदि भी उन देशों में पहुँचा। श्रीलंका में भी इसी प्रकार भारत की अजन्ता शैली की चित्रकला इन्हीं धर्म-प्रचारकों के साथ पहुँची। श्रीलंका में सिगिरिया या सिंहगिरिया नामक गुफाओं में अजन्ता की चित्रशैली के दर्शन होते हैं।

सिगिरिया गुफाओं का समय—अजन्ता और बाघ की गुफाओं को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि यथा समय पर समुचित सुरक्षण की शीघ्र व्यवस्था न होने के कारण उनके चित्र नष्ट हो गए, परन्तु श्रीलंका-द्वीप की सरकार ने सिगिरिया गुफाओं की

रेखाचित्र सं० १३ गंधर्व युगल
(अजन्ता गुफा नं०-१, सातवीं शताब्दी)

देवी-देवताओं का अंकन किया गया है। इस प्रकार यह शैली एक धर्म विशेष तक सीमित नहीं रही बल्कि विभिन्न समुदायों की कला के रूप में व्यापक रूप धारण कर गई। यद्यपि इस शैली के विषय धार्मिक हैं, परन्तु फिर भी चित्रकार ने जीवन और संसार में रुचि प्रदर्शित की। अजन्ता के चित्रों में झूला झूलती युवती, मरती राजकुमारी तथा नृत्य करती बालाओं का अंकन ही नहीं वरन् कई अन्य सांसारिक पक्षों का अंकन हुआ है। इसी प्रकार बादामी तथा सित्तन्नवासल में भी 'विरहणी' तथा 'नर्तकी' आदि का अंकन है। धार्मिक विषयों के साथ चित्रकार शृंगार तथा जन-जीवन सम्बन्धी विषयों की उपेक्षा नहीं कर सका है और इस आधार पर यह शैली धर्मनिरपेक्ष है। (देखिए रेखाचित्र—'गंधर्व युगल')

जातक कथाएँ—जातक कथाओं का अर्थ है पूर्वजन्म की कथाएँ। यह जातक कथाएँ बुद्ध के जन्म-जन्मान्तर की कथाएँ हैं, जिनको उन्होंने स्वयं अपने उपदेशों में सुनाया और बताया कि कई जन्मों से वह इसी प्रकार अनेक रूपों में अवतीर्ण होते आ रहे हैं। यद्यपि अजन्ता में जीवन तथा धर्म दोनों से सम्बन्धित चित्र हैं परन्तु फिर भी विशेष रूप से जातक कथाओं या बुद्ध के जीवन की कथाओं का अंकन है। अतः अजन्ता चित्रावली को बुद्ध के प्रति समर्पण मानना उपयुक्त होगा।

चित्रों की विशालता और योजना—अजन्ता की गुफाओं के चित्रों ने या अन्य गुफाओं के चित्रों ने आज अपनी विशालता और सुंदर योजनाओं के कारण समस्त संसार का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर लिया है। अधिकांश चित्र मानवाकार या कुछ छोटे हैं परन्तु चित्र के मुख्य व्यक्ति को कुछ बड़ा बनाया गया है। इस प्रकार चित्र का प्रमुख व्यक्ति या चित्र का नायक कुछ बड़े आकार का होने के कारण सरलता से पहचाना जा सकता है। चित्रों की योजना सुंदर और सुव्यवस्थित है। चित्रों के चारों ओर आलेखन बनाकर योजना को अधिक पुष्ट बना दिया गया है। प्रमुख घटना को चित्र योजना में ऐसा स्थान दिया गया है कि दर्शक की दृष्टि सर्वप्रथम चित्र योजना के गर्भभाग पर पड़ती है। (देखिए रेखाचित्र संख्या ८) यद्यपि चित्रों की योजनाएँ अलंकारपूर्ण, सरल और ज्यामितिक योजना पर आधारित हैं, फिर भी चित्र के प्रमुख व्यक्ति को ऐसे स्थान पर संजोया गया है कि दर्शक की दृष्टि सर्वप्रथम चित्र के मुख्य व्यक्ति पर ही पड़े। इस प्रकार इस शैली में 'दृष्टि के केन्द्रत्व' के सिद्धान्त का सुंदरता से पालन किया गया है। चित्र की गौण कथाओं या पात्रों को उनके प्रसंगानुकूल स्थानों पर रखा गया है। अजन्ता के चित्रकार ने संयोजन सम्बन्धी सिद्धान्तों का कुशलता से पालन किया है और उन्होंने अपने चित्रों की योजनाओं में जीवन डाल दिया है। प्रायः महात्मा बुद्ध की विशाल सक्रिय आकृति को केन्द्रबिन्दु मानकर उसके चारों ओर सहायक आकृति-समूहों की रचना की गई है।

छतों के आलेखन—इस समय जब आधुनिक यूरोप के देशों में चित्रकला का विकास भी नहीं हुआ था, हमारे देश में चित्रकला विकास के उच्चतम शिखर पर पहुँच गई थी। भारत में भित्तियों के अलंकरण तक ही चित्रकला सीमित नहीं रही परन्तु छतों पर भी चित्रकारी करने की परम्परा प्रारम्भ हो गई थी। यों तो सर्वप्रथम जोगीमारा की छत पर भी चित्रकारी का काम किया गया परन्तु विधिवत रूप से सर्वप्रथम अजन्ता में छतों पर चित्रकारी की गई। चित्रकारों ने छतों पर जलचरों, पक्षियों और कमल लताओं के सुंदर आलेखनों का अंकन किया है। (देखिए रेखाचित्र—'अलंकरण अभिप्राय') इन पक्षियों तथा जलचरों के अतिरिक्त गंधर्व तथा विद्याधर युगल भी बादलों के बीच-बीच में बनाये गए हैं। छतों पर जिस पलस्तर का प्रयोग किया गया है उसमें धान की भूसी का प्रयोग किया गया है जिससे यह पलास्तर छतों पर ठीक प्रकार चिपक गया है। अजन्ता में चित्रों के पलस्तर बनाने की विधि का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है। छतों पर आलेखन बनाना भित्ति पर चित्र बनाने से अधिक कठिन कार्य था क्योंकि छतों पर अलंकरण करने के लिए चित्रकारों को मचान बनाकर, मचान पर पीठ के बल लेटकर काम करना पड़ता था। इन आलेखनों में इतनी पूर्णता और सुंदरता है कि चित्रकार की कठिन स्थिति और असहाय अवस्था का ज्ञान तक नहीं होने पाता है।

आलेखन—यदि अजन्ता को आलेखनों की खान कहा जाय तो अनुचित न होगा। अजन्ता के समान बाघ गुफाओं में भी आलेखनों का अत्यधिक महत्त्व है और किसी सीमा तक बाघ के आलेखन अजन्ता को मात कर गए हैं। रिक्त स्थानों, वस्त्रों, मकानों, मुकुटों, आभूषणों आदि में आवश्यकतानुसार आलेखन बनाये गए हैं। इन आलेखनों में चित्रकार ने हाथी, बंदर, वृषभ, मीन, मकर, मृग, महिष, हंस, तोता, बत्तख, कमल, कुमुद आदि सुंदर पशु-पक्षियों, पुष्पों तथा लताओं का प्रयोग किया है। यह आलेखन, बलवती रेखा के अनन्त प्रवाह, गति संतुलित-योजना और छन्दमय अभिप्रायों की लयात्मक पुनरावृत्ति के कारण शक्तिशाली बन गए हैं। आलेखनों के सुंदर उदाहरण अजन्ता की पहली गुफा में प्राप्त हैं। इन आलेखनों के चित्रण का समय सातवीं शताब्दी का मध्य माना जा सकता है (देखिये रेखाचित्र—'अलंकरण अभिप्राय') इन आलेखनों को काली तथा लाल (हिरोंजी की) पृष्ठभूमि पर पहले सफेद रंग से बनाया गया है, उसके पश्चात पारदर्शी रंगों का प्रयोग किया गया है। बाघ गुफाओं में यह आलेखन काले तथा लाल रंग से ही बनाये गए हैं। यह आलेखन आलंकारिक हैं परन्तु इनमें संगीत की लय और मृत्यु की गति विद्यमान है। इन आलेखनों में लम्बी अटूट प्रवाहपूर्ण रेखाओं का प्रयोग है। इन आलेखनों में व्यवस्था सुंदर है और कहीं भी आवश्यकता से अधिक स्थान खाली नहीं छोड़ा गया है और उचित अन्तराल-व्यवस्था करने के कारण ये आलेखन संतुलनपूर्ण, ठोस और प्रभावशाली हैं।

आलंकारिकता—पूर्वी देशों की चित्रकला आलंकारिक मानी गई है, जबकि पाश्चात्य देशों ने यथार्थता को अपनी कला का उद्देश्य माना। इस प्रकार एशिया की अधिकांश कला आलंकारिक और आध्यात्मिक बन गई। भारतवर्ष में विकसित अजन्ता की कला विशेष रूप से आलंकारिकता और आध्यात्मवाद के कारण सम्पूर्ण एशिया की एक उत्कृष्ट कला बन गई। अजन्ता की चित्रकारी से आलंकारिकता का चरम विकास दिखाई पड़ता है। इस आलंकारिकता को प्राप्त करने के लिए चित्रकार ने ज्यामितीय आकारों की सहायता ग्रहण की है। ज्यामितीय आकारों के संयोग से चित्रकार ने यथार्थ को एक आदर्श और काल्पनिक रूप प्रदान किया है। इस प्रकार यथार्थ और ज्यामितीय गोलाई युक्त आकारों के सम्मिश्रण से मौलिक तथा आलंकारिक रूपों का सर्जन करना कलाकारों की एक महान विशेषता है। दूसरी ओर अजन्ता के कलाकारों ने आकृतियों को सरलतम रूपों में बाँधने की सफल चेष्टा की है। सरल तथा आलंकारिक आलेखनों में कलाकारों ने अपनी कल्पना तथा भावना की मधुर और शृंगारमय लड़ी को जोड़ दिया है। अतएव इस शैली का आलंकारिक पक्ष निर्जीव नहीं होने पाया है, वरन् उसमें भावना, आत्मा और नैसर्गिक कल्पना का सजीव और उज्जवल रूप दिखाई पड़ता है।

रेखा—भारतवर्ष तथा अन्य पूर्वी देशों की आलंकारिक चित्रकला ने विशेष रूप में रेखा को ही ग्रहण किया है किन्तु रेखा के सर्वोत्तम उदाहरण अजन्ता की कला में ही प्राप्त होते हैं। चित्रकार ने निपुणता के साथ आवश्यकतानुसार अपनी रेखा को कोमल, कठोर, पतला या मोटा बनाया है। इस शैली में गोलाई या डील-डौल को ही रेखा के द्वारा प्राप्त नहीं किया

गया है, बल्कि स्थितिजन्य लघुता, बल, उभार, अलंकरण तथा कई अन्य विशेषताओं को रेखा द्वारा प्राप्त किया गया है। मानव के भिन्न-भिन्न रूपों, चरित्रों तथा भावों को रेखा के द्वारा ही सफलता से अभिव्यक्त किया गया है। इस प्रकार की भावाभिव्यंजक रेखा का उदाहरण अजन्ता की पहली गुफा के अवलोकेतेश्वर चित्र में प्राप्त है, इस चित्र में सिद्धार्थ की मुखमुद्रा में दुख, चिंतन तथा शोक का भाव केवल एक रेखा से ही अंकित कर दिया गया है। अजन्ता में लगभग बीस प्रकार की रेखा शैलियाँ मिलती हैं। इसी कारण परसी ब्राउन ने पूर्वी देशों की चित्रकला को विशेष रूप से रेखा की चित्रकला माना है। जबकि पाश्चात्य कला छाया-प्रकाश प्रधान है। इस शैली में अधिकांश रेखाएँ अटूट, प्रवाहमय और भावप्रण है। भारतीय रेखा चीन की कोणदार सपाट रेखा से भिन्न है। कभी-कभी अजन्ता के कलाकार ने आकृतियों की दोनों भृकुटियों को एक ही अटूट रेखा से बना दिया है। (देखिए रेखाचित्र–'बोधिसत्व पद्मपाणि')

सरलता–अजन्ता के चित्र सरल रूपों (आकारों), सपाट रंगों और सरल रेखाओं पर आधारित हैं। सरल आकारों में गोलाई या डौल लाने का क्षीण प्रयास किया गया है। बाल, कपड़ों की सिलवटें, आभूषण आदि सभी को चित्रकार ने सरलतम रेखाओं में बाँधने की चेष्टा की है। चित्रों की योजना सरल होते हुए भी प्रभावपूर्ण और चित्ताकर्षक है। कभी-कभी दोनों भृकुटियों को एक ही सरल रेखा से अंकित किया गया है। जिस प्रकार चेहरे की बाहरी सीमा सरल ढंग से बनायी गई है उसी प्रकार विविध आकृतियों को सरल रूप और सपाट आकार प्रदान किया गया है। ये सीमा रेखाएँ गोलाई युक्त हैं और कम श्रम से बनायी गई हैं। (देखिए रेखाचित्र–'पद्मपाणि')

हस्तमुद्राएँ तथा अंग-भंगिमाएँ–हस्त-मुद्राओं तथा अंग-भंगिमाओं के कौशल से अजन्ता के कलाकार ने चित्रों में अपनी समस्त भावनाएँ ऐसे सजीव ढंग से डाल दी हैं कि ये मूक चित्र भी बोलने से लगे हैं। कलाकार ने समकालीन नृत्यकला की प्रचलित हस्तमुद्राओं का प्रयोग किया है जिनमें अत्यधिक नाटकीयता और लाक्षणिकता है। वास्तव में चित्रकार ने बुद्ध तथा अन्य देवी-देवताओं को नैसर्गिक रूप प्रदान करने के लिए नृत्य की मुद्राओं को अधिक उपयुक्त समझा क्योंकि इन मुद्राओं से भव्यता और भावाभिव्यक्ति में अपूर्व शक्ति आ गई है। इसके परिणाम स्वरूप समस्त पात्रों में वह दिव्य रूप प्रतिबिम्बित होने लगा जिसकी आवश्यकता थी। साधारण मनुष्य और महान आत्मा के अंतर को व्यक्त करने के लिए भी नृत्य की मुद्राएँ बहुत उपयुक्त थीं। अतः कलाकार ने बुद्ध जैसी महान आत्मा के अंकन में भेद स्थापित करने के लिए संगीतपूर्ण मुद्राओं का आश्रय लिया। (देखिए रेखाचित्र–'गायक दल' तथा 'अप्सरा', सित्तन्नवासल)

इस शैली में विभिन्न आकृतियों के निर्माण में स्वाभाविक हस्त-मुद्राएँ प्रयोग की गई हैं जिनमें पात्र पकड़े हाथों की मुद्राएँ, शान्ति की हस्त-मुद्रा, धर्मचक्र मुद्रा, शिखर हस्त मुद्रा, कत्तकामुख मुद्रा, दण्ड हस्त मुद्रा, नीलकमल धारण किये हुए भगवान बुद्ध की

हस्तमुद्रा, वैराग्य सूचक साधु की हस्त मुद्रा सुंदर ही नहीं वरन् भावपूर्ण भी है। हस्तमुद्राएँ भाषा के समान समस्त चित्र की कथा को व्यक्त कर देती हैं।

भाव प्रदर्शन की दृष्टि से अंग-भंगिमाओं का चित्र की लिखाई में विशेष महत्त्व है। अजन्ता के चित्रकारों ने स्त्रियों को सुकोमल लतिका के समान लचकदार भंगिमाओं में अंकित करके अपनी कल्पना ओर छन्दमय बुद्धि का परिचय दिया है। अजन्ता के चित्रों में 'महाप्रजापति' की भंगिमा दर्शनीय है, जिसमें वे एक तमाल-लतिका के समान स्तम्भ के सहारे अपना बायाँ पैर मोड़े खड़ी हैं। मुड़े हुए पैर वाली खड़ी आकृति के त्रिकोण मुड़े हुए पैर से स्तम्भ की लम्बवत् सीधी रेखाओं की नीरसता समाप्त हो गई है। वक्ष की गोलाई के पश्चात् कमर की लिखाई में लचक के साथ भंगिमा पर रहस्य छिपाये अजंता के चित्रकार ने अनेक स्त्री आकृतियों का निर्माण किया है। प्रत्येक पात्र या पात्री की भंगिमा में अत्यधिक स्वाभाविकता और सजीवता है। भंगिमाएँ आकर्षक और प्रभावपूर्ण हैं, जैसे—'मरती राजकुमारी', 'अवलोकेतेश्वर', 'झूला-झूलती युवती' तथा 'मार-विजय' में बुद्ध की ध्यान मुद्रा उत्तम है। हस्तमुद्राओं और अंग-भंगिमाओं की भव्यता को ठीक अनुपात तथा सरल सौन्दर्य ने और अधिक भावाभिव्यंजक बना दिया है। आकृतियों की विभिन्न प्रकार की भंगिमाएँ बनाते समय कलाकार ने माँसिलपेशियों तथा अस्थिपंजरों का पूर्ण ध्यान रखा है। किसी भी आकृति की भंगिमा से उसकी शारीरिक रचना में विकृति नहीं होने पाई है इस कारण आकृतियों में सजीवता और स्वाभाविकता है।

वर्ण विधान—काल के क्रूर आघातों ने प्राचीन चित्रकारी का बहुत कुछ वर्ण सौष्ठव तथा लावण्य छीन लिया है, फिर भी आज तक अजन्ता के चित्रों की आभा फीकी नहीं पड़ी है। अजन्ता के चित्रों में सुंदर वर्ण छटा यत्र-तत्र बिखरी दिखाई पड़ती है। यद्यपि इन चित्रों की चमक पर्याप्त धूमिल पड़ चुकी है तथापि रंग जानदार प्रतीत होते हैं। चमकदार नीले हरे और बैंगनी रंग अपनी पूर्ण आभा में आज भी जगमगाते हैं। शरीर तथा कपड़ों का रंग लावण्ययुक्त और संगत है। अजन्ता के कुछ आरम्भिक चित्रों को छोड़कर सोलहवीं तथा सत्रहवीं गुफा में अजन्ता के चित्रकारों ने गहरी पृष्ठभूमि पर हल्के वर्ण विधान में आकृतियाँ बनाने की प्रवृत्ति दिखाई है, परन्तु दूसरी ओर हल्की पृष्ठभूमि पर गहरी आकृतियों के बनाने की प्रवृत्ति भी दिखाई पड़ती है जो यूरोप की वेनिस-चित्रकला शैली (संस्थान) के समान है। चित्रकार दर्शक के ध्यान को चित्र की ओर आकृष्ट करने के लिये बहुत जागरूक रहा, इस कारण उसने मानवाकृतियों के बालों में काले रंग का प्रयोग किया है, जिससे रूप और लावण्य की वृद्धि हुई है और इच्छित प्रभाव उत्पन्न हो गया है।

अजन्ता के चित्रकार की वर्ण विधान सम्बन्धी शिल्प कुशलता का एक सुंदर उदाहरण सत्रहवीं गुफा के एक चित्र 'महाहंस जातक' में देखा जा सकता है। यह चित्र अपने वर्ण विधान के कारण बहुत विख्यात हो चुका है और रंग की योजना के आधार पर इसकी

अजन्ता का सर्वश्रेष्ठ चित्र माना जाता है। इस चित्र में कलाकार ने पूर्णतः स्वतंत्र रूप से रंगों का चयन किया है। इस चित्र में राजा एक ऊँचे सिंहासन पर बैठा है और चारों ओर अनुचर खड़े हैं। इसमें से एक अनुचर राजसी छत्र तथा दूसरा चँवर धारण किये है और तीसरा अपने रंग के कारण हब्शी जैसा प्रतीत हो रहा है। यह हब्शी राजा के नीचे पैरों पर बैठा है। उसका वर्ण गहरा लाल है, जो निश्चित रूप से राजसी बहेलिया है, पीछे आलेखनों से सुसज्जित कनात खड़ी है। चित्र की अग्रभूमि में एक तालाब है जिसमें कमलपुष्प है तथा जल के पक्षी जल-विहार कर रहे हैं। इस चित्र में श्वेत रंग के शीतल प्रयोग से चित्रकार ने चित्र को एक उत्तम संतुलन प्रदान किया है। इस चित्र में विभिन्न आकृतियों के शरीर में गुलाबी, भूरा, गहरा लाल तथा टेरावर्ट (गहरा गंदा हरा) रंग लगाया गया है। इस चित्र में गहरी पृष्ठभूमि पर, जो लगभग काली है, हल्के रंग की आकृतियाँ बनायी गई हैं। इस गहरे रंग की पृष्ठभूमि पर विभिन्न बलों और रंगों में विभिन्न वस्तुएँ बनायी गई हैं जिससे चित्र में कठोरता नहीं आने पाई है। चित्र के निचले भाग में संगत हरे रंगों का सफेद और लाल रंगों के साथ प्रयोग है। इस चित्र में अजन्ता के कलाकार ने नाटकीयता के प्रभाव को भी रोचक वर्ण-विधान के द्वारा प्रदर्शित किया है। कपड़ों, आभूषणों तथा अन्य साज-सज्जा में उपयुक्त तथा रोचक वर्णविधान है।

भित्तिचित्रण में गिने-चुने प्राकृतिक खनिज रंगों का प्रयोग ही होता है ताकि वे चूने के क्षारात्मक प्रभाव से सुरक्षित रह सकें। इस शैली के चित्रों में जिन रंगों का स्वतंत्रता से प्रयोग किया गया, उनमें सफेद, लाल, भूरे से बने विभिन्न हल्के तथा गहरे रंग हैं। स्थानीय हरे रंग का प्रयोग किया गया है जो तनिक गंदा रंग है। अजन्ता तथा बाघ में विशेष रूप से नीले रंग का प्रयोग है। सफेद रंग प्रायः अपारदर्शी है और उसको चूने या खड़िया से बनाया गया है। लाल तथा भूरे लौह (अयस्क) से प्राप्त खनिज रंग हैं। हरा रंग एक स्थानीय अयस्क (खनिज) से बनाया गया है जो टेरावर्ट (Terreverte) है। नीला रंग फारस से आयात किये हुए लेपिसलाजुली (Lapis-Lazuli) एक बहुमूल्य पत्थर को घिसकर बनाया गया है। शेष रंगों में पीला (रामरज), गहरा लाल (हिरौंजी तथा गेरुआ खनिज) स्थानीय हैं। चमकदार पीले रंग के प्रयोग के लिए अनुमानतः प्राकृतिक रूप में संखिया से उपलब्ध पीले रंग का प्रयोग है (Natural arsenic sulphide)। रंगों को चावल के माँड़ तथा वज्रलेप (सरेस) में मिलाया जाता था।

परिप्रेक्ष्य—(Perspective) परिप्रेक्ष्य या अंग्रेजी शब्द पर्सपेक्टिव के दो पक्ष माने गये हैं, जिसमें प्रथम दृष्टि सम्बन्धी (Visual Perspective) और द्वितीय मानसिक परिप्रेक्ष्य (Mental perspective) है। अजन्ता के चित्रकारों ने भावना और कल्पना के महत्त्व को स्थापित करने के लिए मानसिक परिप्रेक्ष्य को ही उपयुक्त समझा। अधिकांश पाश्चात्य कला पारखियों ने साधारण दृष्टि-ज्ञान या दृष्टिक्रम (Visual perspective) के अभाव में इन चित्रों की आलोचना की है जो उनकी भारी भूल है, क्योंकि आज यूरोप में

इसी भावनात्मक या मानसिक परिप्रेक्ष्य की ओर बल दिया जा रहा है। कलाकार ने इसी मानसिक परिप्रेक्ष्य से अपनी भावनाओं जैसे श्रद्धा, घृणा, क्रोध आदि भावों को साधारण दृष्टा तक पहुँचाने में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। कलाकारों ने चित्र में प्रयुक्त अनेक आकृतियों को सामान्य अनुपात से अधिक बड़ा या छोटा बनाकर उनके पद, महत्त्व तथा आध्यात्मिक उत्थान को व्यक्त किया है। इस प्रकार का उत्तम उदाहरण अजन्ता का 'राहुल समर्पण' नामक चित्र है, जिसमें कमल पर खड़े भगवान बुद्ध की आकृति यशोधरा की आकृति से अनुपात में बहुत बड़ी बनाई गई है। और यह आकृति भवन के बराबर है। भवन आदि के परिप्रेक्ष्य में चित्रकार ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि का परिचय दिया है और दृष्टिक्रम या परिप्रेक्ष्य से आलेखनों की सुंदरता और रूप को नष्ट नहीं होने दिया है। चित्रकार योगी के समान एक ही स्थान पर बैठे-बैठे ध्यान या समाधि के द्वारा समस्त संसार या सृष्टि का अवलोकन कर लेता था और चित्रांकित कर देता था।

मुकुट, आभूषण तथा अलंकरण—अजन्ता तथा सभी अन्य गुफाओं के चित्रों में मुकुटों, आभूषणों तथा वस्त्रों को सुंदरता से अंकित किया गया है। राजा और रानी के मुकुटाकारों में ऊँचाई का विशेष अंतर है। देवताओं तथा महापुरुषों के मुकुट शिखर के समान ऊँचे और भव्य हैं। परन्तु सित्तन्नवासल के चित्रों में महादेव का ऊँचा मुकुट उनकी अनोखी जटा-जूट से बनाया गया है। वैसे अजन्ता में मुकुटों के सबसे सुंदर उदाहरण प्राप्त हैं। इन उदाहरणों में नागराज का मुकुट जिसके पीछे पाँच फन का नाग बना है तथा

रेखाचित्र सं० १४

केश कलाप (अजन्ता)

रेखाचित्र सं० १५ :- राजकुमारी
(अजन्ता गुफा नं० १०, सातवीं शताब्दी)

'गृहत्याग' नामक चित्र में बुद्ध का मुकुट उल्लेखनीय है, (देखिए रेखाचित्र—'पद्मपाणि', 'वज्रपाणि' तथा 'गंधर्व युगल') मुकुट की बनावट तथा आकार से ही व्यक्ति का पद, चरित्र या महत्त्व समझ में आ जाता है। आभूषणों में वक्षस्थल पर बहुमूल्य रत्नों से जड़ित मोतियों की लड़ियोंदार लम्बी मालाओं तथा गरदन में बड़े-बड़े मोतियों की मालाओं तथा कम्बुकन्ठों का इस शैली में प्रयोग किया गया है। मोतियों की मालाएँ मुकुटों से माथे पर लटकती तथा गरदन से वक्षस्थल पर गंगा तथा यमुना या किसी लता के समान लहराती सी प्रतीत होती हैं। अन्य आभूषणों में कानों के पत्र-कुण्डल, मीनाकार कुण्डल, मकराकार कुण्डल, भुजाओं में अनन्त तथा कमर में मोतियों या कड़ियों से युक्त करधनियाँ चित्रित की गई हैं। (देखिए रेखाचित्र—'वज्रपाणि', 'गायकदल', 'अप्सरा' तथा 'राजकुमारी') हाथों में सुंदर गोल सुडौल कड़ों को पहने लम्बे हाथों वाली स्त्रियाँ मनोहारी बन गई हैं। कपड़ों, परदों, कालीनों, कनातों तथा वस्त्रों आदि को सजाने के लिये सुदर आलेखन बनाये गए हैं जिनमें पशु-पक्षियों तथा जलचरों का अंकन है।

केश-विन्यास—अजन्ता की चित्रकारी अति प्राचीन है परन्तु आज भी केश शृंगार की रीतियों में आधुनिक स्त्री-जगत अजन्ता की केश-विन्यास प्रणाली से प्रेरणा लेता है। स्त्रियों की लम्बी लहराती नागिन जैसी वेणियों में बंधे बाल, कंधों पर लुढ़कते घुंघराले, धमीला ढंग के बाल, जटा या जूटटसर (गुंथे हुए) बाल, माथे पर लटकते चिकुर, हवा में उड़ते तरंग केश, खुले एवं छिटके हुए कुन्तल केश, जूड़ों में बंधे बाल आदि अनेक प्रकार के केश-विन्यास को

अनोखा रूप दिया गया है। यदि अजन्ता को केश-विन्यास या केश-सज्जा की खान माना जाए तो अनुचित न होगा। सुंदर, सुकोमल केशों के अतिरिक्त क्रूर और धूलधूसरित या सिंह केसर (राक्षसों के बाल) आदि अनेक प्रकार के बालों के अंकन में भी चित्रकार पीछे नहीं रहा। (देखिए रेखाचित्र–'गायकदल', 'गंधर्व युगल' 'केश–कलाप' तथा 'राजकुमारी')

स्त्रियों का स्थान—अजन्ता में स्त्रियों को बहुत ऊँचा स्थान प्राप्त हुआ है। उनको कहीं भी शील से गिरा हुआ नहीं दिखाया गया है। अधिकांश शरीर के नीचे वाले भाग में स्त्रियाँ साड़ी या अपारदीना (प्रतिहारी आदि) और शरीर के ऊपरी भाग में चोली पहने है। कहीं-कहीं उरोज नग्न भी हैं परन्तु स्त्रियों में प्रकृति, शक्ति और माँ का रूप झलकता है। स्त्रियाँ आभूषणों से युक्त हैं। यशोधरा के रूप में नारी की त्यागमूर्ति कितनी भव्य और महान है, जबकि वह अपना सर्वस्व एकमात्र पुत्र 'राहुल' बुद्धदेव के चरणों में समर्पित कर देती है। चित्रकार ने स्त्री के नाना रूप जैसे–सुंदरी, युवती, विरहणी, संयोगनी, माँ, वृद्धा आदि सब ही का अंकन किया है। परन्तु उसके प्रत्येक रूप में शालीनता और नारी की महान त्याग मूर्ति प्रतिबिम्बित होती है। स्त्री को सौन्दर्य, कोमलता और शक्ति का अवतार माना गया है।

आध्यात्मिकता और सहानुभूति की भावना—अजन्ता के चित्रकार को जड़ तथा चेतन से समान सहानुभूति और संवेदना थी। पशु तथा पक्षियों के चित्रण में आत्मा का वही विकास दिखायी पड़ता है जो मानव आकृति के चित्रण में है। जीव-प्रेम और सहानुभूति के उत्तम चित्र उदाहरणों में अजन्ता के 'महाहंस जातक', 'मृग जातक', 'गज जातक' आदि चित्रों से सुस्पष्ट है कि कलाकार ने इन पशुओं तथा पक्षियों में अपनी जैसी आत्मा का अनुभव किया है और जीव को मानव के समान माना है। बौद्ध धर्म की अहिंसा और बुद्ध के पूर्व जन्म की कथाओं, जिनमें वह कभी बोधिसत्व पशु तथा कभी पक्षी के रूप में अवतीर्ण हुए, के कारण भी बौद्ध दर्शन में जीव के प्रति आदर, दया और सहानुभूति आयी। अतएव पशु-पक्षियों की आत्मा का भी अत्यधिक विकसित और उज्ज्वल रूप दिखाया गया है। बुद्ध ने स्वयं भी जीव-हिंसा और बलि का विरोध किया और अहिंसा तथा दया की शिक्षा दी। इन सभी परिस्थितियों का कला पर गहरा प्रभाव पड़ा और कलाकार ने जीव को समादर, सहानुभूति और संवेदना से देखा। इस कारण प्रत्येक आकृति में मानव-आत्मा का साक्षात्कार होता है।

भाव तथा रूप—अजन्ता के चित्रकारों ने विभिन्न भावों को रूप की ओट में अपनी तूलिका की सरल रेखाओं से अंकित किया है। भाव-प्रदर्शन के लिए चित्रकार ने हस्तमुद्राओं तथा अंग-भंगिमाओं का सहारा लिया है और इनके द्वारा मूक चित्राकृति को कलाकार ने वाणी प्रदान की है। भय, शान्ति, हर्ष, शृंगार, रौद्र तथा उत्साह आदि भावों को चित्रकार ने चित्र आकृतियों की मुखाकृति पर विधिवत लिख दिया है। भाव की दृष्टि से 'राजा के चरणों पर नर्तकी', 'वेस्सांतर जातक' तथा 'मार-विजय' उत्तम चित्र उदाहरण हैं। भय तथा आतंक, याचना तथा ग्लानि, शान्ति तथा आनंद आदि भावों का इन चित्रों में पूर्ण रूपेण अंकन हुआ

है। भाव के अनुकूल ही चित्रकार ने असंख्य रूपों का निर्माण किया है। रूप आकृति की आत्मा तथा जीवन का प्रतीक हैं। प्रत्येक आकृति के रूप में अजन्ता के कलाकार ने कमाल कर दिया है। राजा, रानी, साधु, सेवक, दासी, साधु के वेश में धूर्त, वीर-सिपाही, योद्धा, वैरागी, भिक्षु, तपस्वी, कामनी तथा माँ प्रत्येक रूप में अपना व्यक्ति वैशिष्ट्य है। प्रत्येक आकृति की शारीरिक रचना, मुखाकृति तथा मुद्रा में विशेष अंतर है। मुखाकृति में आँखों की लास्य, भौंह की लचक या सीधापन, जिससे कोमलता या चिन्तन का भाव दिखाया गया है, अजन्ता के चित्रों की अपनी विशेषता है। शरीर का गहरा या हल्का वर्ण स्वयं बोल उठता है कि मैं कौन हूँ। उदाहरणार्थ 'षडदन्तजातक' कथा के चित्र में वैंगी पर हाथी के दाँत लाते कहारों और 'महाहंस जातक' कथा के चित्र में बहेलिये अपने रूप, छोटे शारीरिक अनुपात (प्रमा) तथा गहरे वर्ण से ही अपना परिचय देते हैं। राजा, रानी, तथा महान पुरुषों के रूप और लावण्य ही उनका परिचय दे देते हैं, उनको ऊँचे आसनों पर बैठा बनाया गया है। इस प्रकार रूप से ही कुलीन तथा दास वर्ग का परिचय हो जाता है।

युद्ध-दृश्य—चित्रकार ने जहाँ एक ओर बुद्ध के प्रति भक्ति, श्रद्धा और अहिंसा की भावना अभिव्यक्त की है, वहीं दूसरी ओर उसने सफलता से युद्ध चित्रों तथा भयानक दृश्यों का निर्माण भी किया है। 'डांकनियों का युद्ध', 'युवतियों का वध करने को उद्धत 'राजा' जो नग्न खड्ग् लिये बैठा है तथा 'विदुर पंडित जातक' चित्र में तेजी से बढ़ते हुए अश्वारोहियों का दल इस प्रकार की प्रभावशाली कृतियाँ हैं। अजन्ता के कलाकार ने यदि एक ओर कोमल-कमनीय रूपों का निर्माण किया है तो दूसरी ओर भयपूर्ण, भयानक, राक्षसी, हिंस्र रूपों का भी सफल्ना से निर्माण किया। 'मार विजय' चित्र में ऐसे अनेक भयंकर राक्षस भगवान बुद्ध पर चढ़ाई करते बनाये गए हैं।

वस्त्र तथा भवन—अजन्ता के चित्रों में गुप्तकालीन भवन तथा वास्तु का प्रयोग है, वैसे वाकाटक, शुंग सातवाहन संस्कृतियाँ भी अजन्ता की कला में बोलती हैं। विशेष रूप से कक्ष, वीथिकाएँ, स्तम्भ, चैत्य तथा स्तुप आदि सुंदरता से बनाये गए हैं। इन चित्रों में गुप्तकालीन भव्य पहनावे का विशेष प्रभाव है। पुरुषों को अधिकांश अधोभाग में धोती पहने या शरीर के ऊपरी भाग में चुस्त बाना या ढीला कुर्ता पहने बनाया गया है। स्त्रियों का पहनावा सामान्य रूप से कोहनी तथा आस्तीन की चोली है तथा नीचे के भाग में धोती या आँचल चित्रित है। नर्तकियों आदि को विशेष प्रकार का चुस्त कुर्ता तथा तंग पायजामा पहने बनाया गया है। कभी-कभी स्त्रियों के उरोज नग्न हैं, ऊँचे मुकुट तथा लम्बी-लम्बी मालाएँ गु[illegible] संस्कृति का प्रभाव है।

आकार, छन्द तथा लय—कलाकारों ने अपने आकारों को अत्यधिक संगीतमय और आकर्षक बनाने की चेष्टा की है। प्रत्येक वस्तु को एक लयपूर्ण आकार प्रदान करके कलाकार ने अमर सौन्दर्य की रचना की है। प्रत्येक आकृति में सुकोमल कान्टूर है, जिनसे छन्द, लय तथा संगीत उत्पन्न होता है और प्रत्येक आकार की सीमारेखा एक मधुर ध्वनि से झूमती चलती है।